www.thearyasamaj.org

जिसने बदली दिशा जगत् की,
धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,
जय सत्यार्थ प्रकाश की ।।

।। ओ३म् ।।

वर्ष - ५५ अंक - ९
मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १००) रु०
आजीवन - १०००) रु०
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

आर्य-संसार

भाद्र-आश्विन: सम्वत् २०७० वि० सितम्बर, २०१३

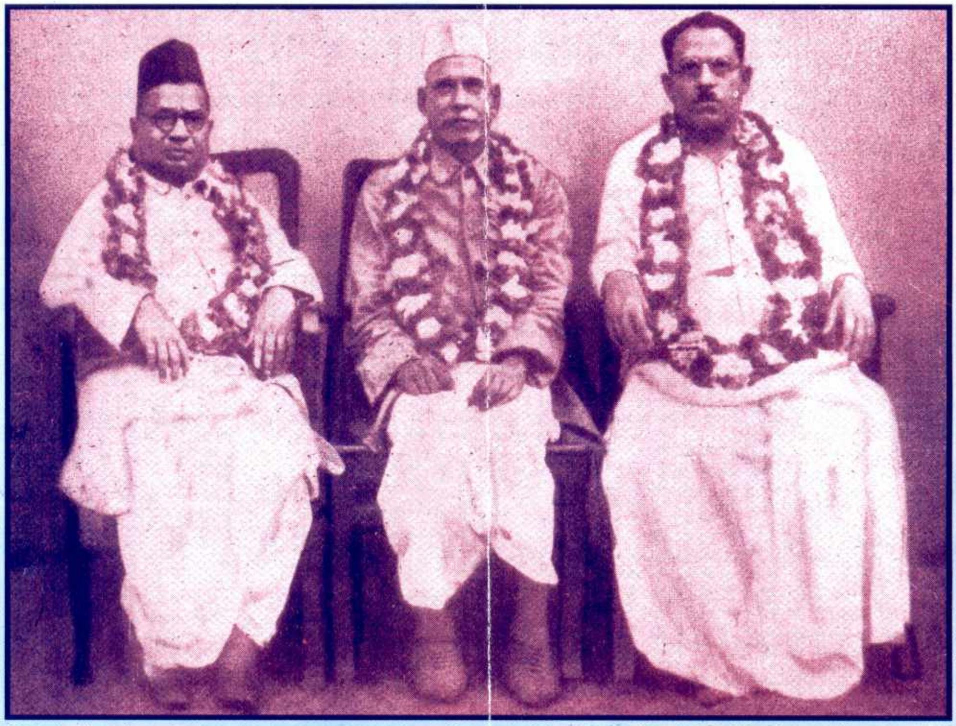

रघुमल आर्य विद्यालय के भूतपूर्व प्रधानाध्यापकत्रय : (बायें से) पण्डित अयोध्या प्रसादजी, श्री जनार्दनजी भट्ट एवं श्री रामनारायण लालजी

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

श्रावणी उपाकर्म एवं वेद प्रचार सप्ताह

आर्य समाज कलकत्ता द्वारा **श्रावण पूर्णिमा बुधवार २१ अगस्त से श्री कृष्ण जन्माष्टमी २८ अगस्त बुधवार २०१३ पर्यन्त** आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी, कलकत्ता-६ के सभागार में श्रावणी उपाकर्म एवं वेद प्रचार सप्ताह हर्षोल्लास पूर्वक मनाया गया । इस अवसर पर प्रतिदिन प्रातः ७ बजे से ९ बजे तक यजुर्वेद पारायण यज्ञ आचार्य डा० शिवदत्त पाण्डेय जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ । ऋत्विग्गण के रूप में वेद पाठ कर रहे थे—प० आत्मानन्द शास्त्री, पं नचिकेता भट्टाचार्य, पं० देव नारायण तिवारी, पं० वेद प्रकाश शास्त्री, पं० योगेशराज उपाध्याय, पं० कृष्णदेव मिश्र, श्रीमती अर्चना शास्त्री । प्रथम दिन यज्ञ वेदी पर उपस्थित सभी याज्ञिकों के यज्ञोपवीत परिवर्तित करवाये गये । यज्ञ के उपरान्त आचार्य डा० शिवदत्त पाण्डेय जी द्वारा ९ बजे से ९.३० बजे तक वेदोपदेश प्रस्तुत किया गया । सायंकालीन सत्र वेद कथा के रूप में सायं ७.३० बजे ९ बजे तक चलता था जिसमें ७.३० बजे से ८ बजे तक श्रीमती अंजु सुमन (समस्तीपुर—बिहार) द्वारा भजन तथा ८ बजे से ९ बजे तक आचार्य डा० शिवदत्त पाण्डेय जी द्वारा वेद कथा की जाती थी । वेद कथा के प्रत्येक दिन के विषय थे **(१) श्रावणी उपाकर्म का महत्व एवं संस्कृत रक्षा दिवस के रूप में । (२) वेदोक्त शिक्षा व्यवस्था । (३) वेदोक्त परिवार व्यवस्था । (४) वेदोक्त सामाजिक व्यवस्था ।(५) वैदिक शासन व्यवस्था एवं राष्ट्र धर्म (६) व्यक्तित्व विकास के विभिन्न आयाम ।(७) वैदिक त्रैतवाद ।**

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

२८ अगस्त को प्रातः यजुर्वेद पारायण यज्ञ की पूर्णाहुति सम्पन्न हुयी । सायंकाल ७ बजे से योगेश्वर श्री कृष्ण जी की जन्म जयन्ती मनायी गयी । इस कार्यक्रम की अध्यक्षता स्वामी प्रकाशानन्द जी ने की। श्रीमती अंजु सुमन एवं श्रीमती सुषमा गोयल जी ने श्री कृष्ण जी से सम्बन्धित भजन प्रस्तुत किये । वक्ताओं में श्रीमती गायत्री तिवारी, सीताराम वैदिक कालेज से श्री प्र० सुधाकर मिश्र, पं० देव नारायण तिवारी, कुमार सभा पुस्तकालय के अध्यक्ष श्री प्रेमशंकर त्रिपाठी, श्री ओम प्रकाश मस्करा, एवं आचार्य शिवदत्त पाण्डेय जी ने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये ।

वेद संगोष्ठी

विषय—वेद मन्त्रों का वास्तविक अर्थ एवं कर्मकाण्ड में उनका विनियोग ।

वेद प्रचार सप्ताह के अन्तर्गत रविवार २५ अगस्त को प्रातः १० बजे से आर्य समाज कलकत्ता के सभागार में एक वेद संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसका विषय था **'वेद मन्त्रों का वास्तविक अर्थ एवं कर्मकाण्ड में उनका विनियोग ।'** इस संगोष्ठी में आचार्य डा० शिवदत्त पाण्डेय जी के अतिरिक्त कलकत्ता विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग में वेद विषय की प्राध्यापिका डा० मोउ दासगुप्ता एवं सीताराम आदर्श वैदिक विद्यालय से डा० शशि भूषण मिश्र ने अंश ग्रहण किया । इस अवसर पर विद्वान् वक्ताओं ने विशाल वैदिक वाङमय की चर्चा करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं अन्य आचार्यों द्वारा किये गये वेद मन्त्रों के अर्थों का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किया तथा कर्मकाण्ड में वेद मन्त्रों के विनियोग की उपयोगिता पर अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये । आचार्य डा० शिवदत्त पाण्डेय जी ने कहा

(शेष पृष्ठ २३ पर)

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य-संसार

वर्ष ५५ अंक — ९

भाद्रपद-आश्विन-२०७० वि०
दयानन्दाब्द १८९
सृष्टि सं० १,९६,०८,५३,११४

सितम्बर— २०१३

मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १०० रुपये
आजीवन : १००० रुपये

सम्पादक :
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय,
एम. ए.

सह सम्पादक :
श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
सहयोगी संपादक :
श्रीमती सरोजिनी शुक्ला
श्री सत्य प्रकाश जायसवाल
पं० योगेश राज उपाध्याय

इस अंक की प्रस्तुति

१. आर्य समाज की गतिविधियाँ		२
२. इस अंक की प्रस्तुति		३
३. इन्द्र की मित्रता		४
४. महर्षि वचन सुधा-२४	-प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	७
५. वृहत्तर भारत कर्त्तारम् की कृष्णं वन्दामहे	-प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१०
६. मेरा साठ वर्षीय लेखन कार्य : एक सर्वेक्षण आर्यसमाज विषयक साहित्य	-डॉ० भवानीलाल भारतीय	१४
७. साहित्य समीक्षा	-डॉ० भवानीलाल भारतीय	१६
८. 'समत्वं योग उच्चते' का मूर्तरूप थे महात्मा हंसराज	-प्रो० ओम कुमार आर्य	१८
९. ओं भूर्भः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात्	-स्वामी ध्रुवदेवजी परिब्राजक	२१
१०. कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी	-श्री जसवन्त राय गुगलानी	२४

आर्य समाज कलकत्ता

१९, विधान सरणी, कोलकाता-७०० ००६, दूरभाष : २२४१-३४३९

email : aryasamajkolkata@gmail.com

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उत्तरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है ।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा ।

www.thearyasamaj.org

९

इन्द्र की मित्रता

सख्ये त इन्द्र वाजिनो मा भेम शवसस्पते ।

त्वामभि प्रणोनुमो जोतारमपराजितम् ।। ऋग् १-१२-२

शब्दार्थ :–

सख्ये	= मित्रता में	शवसस्पते	= बल के पालक
त, ते	= तुम्हारी	त्वाम्	= तुम को
इन्द्र	= हे ऐश्वर्यवान् परमेश्वर	अभि	= विशेष
वाजिनः	= वाज, अन्न-बल वाले होकर	प्रणोनुमः	= पुनः-पुनः प्रणाम करते हैं
मा	= नहीं	जेतारम्	= जयशील
भेम	= भयभीत हों	अपराजितम्	= अपराजित को

भावार्थ :– हे ऐश्वर्य के स्वामी, बल के पालक इन्द्र ! आपकी मित्रता से हम अन्न-बल वीर्य से सम्पन्न होकर निर्भय हो जाते हैं । हे जयशील-अपराजित इन्द्र ! हम आपको बारम्बार प्रणाम करते हैं ।

व्याख्यान विन्दु :

१. इन्द्र कौन हैं और इन्द्र के सख्य का स्वरूप ।

२. वाजिनः कैसे होते हैं ?

३. शत्रुओं से निर्भय कैसे होते हैं ?

४. जयशील को प्रणाम क्यों ?प्रणाम किसी को क्यों ?

५. कितना भी बड़ा, सामर्थ्यवान् हो उसको भी साथी, सहयोगी की जरूरत होती है, बड़ा कार्य करने के लिए ।

व्याख्या

सच्चा मित्र आवश्यकता के समय अपने मित्र की सहायता अवश्य ही करता है ।

इस मंत्र की मूल भावना आश्वासन है । भक्त ऐश्वर्य के स्वामी परमेश्वर इन्द्र से निवेदन कर रहा है कि हे प्रभु ! आपकी मित्रता हो जाने पर मैं बलवान हो गया हूँ । अन्न, बल, ज्ञान, साधन, किसी वस्तु में निर्बल नहीं रह गया हूँ । इसलिये हे बल के स्वामी परमेश्वर ! अब मुझे किसी से डर नहीं लगता

www.thearyasamaj.org

। आप तो,अपराजित विजेता हैं, आपको बारम्बार प्रणाम करता हूँ, आपके आशीर्वाद से मेरा बल भी बढ़े और आपकी भक्ति भी बढ़ती रहे, जिससे मैं निर्भय रहूँ।

अब देखते हैं कि इन्द्र की मित्रता कैसी है। यूँ तो संसार में कई तरह के मित्र होते हैं, एक तो स्वार्थी मित्र होते हैं, जब तक उनका स्वार्थ रहता है वे आगे-पीछे घेरे रहते हैं;और स्वार्थ समाप्त हुआ और कन्नी काटने लगे—

जब तक पैसा पास, यार संग ही संग डोले।
पैसा रहा न पास, यार मुख ते नहिं बोले ।।

एक मित्र द्रोण और द्रुपद की तरह भी होते हैं। द्रुपद राजा के पुत्र थे। द्रोण के पिता के पास पढ़ते थे। दोनों गुरु भाई थे। द्रुपद ने सहायता करने का वचन भी दिया था। द्रुपद का काम बन गया और द्रोण को फटकार दिया। और द्रोण ने शिष्यों से आक्रमण करवाकर उसका बदला भी ले लिया। भगवान् ऐसे मित्र न दें। मित्रता श्रीकृष्ण और सुदामा की भी थी। सुदामा दीन-हीन निर्धन ब्राह्मण सहायता के लिये श्रीकृष्ण के पास गये और श्रीकृष्ण ने उन्हें हृदय से लगा लिया—

पानी परात को हाथ छुयौ नहिं, नैनन के जल से पग धोयौ।

भगवान् मित्र दें तो कृष्ण-सुदामा जैसे।

यहाँ तो प्रभु परमेश्वर से मित्रता है। और जिसके मित्र परमेश्वर हों उसे क्या भय। भय तो बाहर के शत्रुओं का होता है। लेकिन भीतर के शत्रु काम, क्रोध, लोभ आदि भी बहुत बड़े शत्रु हैं। ये मनुष्य को अन्धा बना देते हैं। कहते हैं उल्लू दिन में नहीं देखता, कौवा रात में नहीं देखता, किन्तु कामी, क्रोधी रातों दिन अन्धे रहते हैं।

दिवा पश्यति नोलूकः, काको नक्तन्न पश्यति
अपूर्वः कोपि कामान्धः दिवा नक्तन्न पश्यति ।।

इन्द्र भगवान् मनुष्य का शरीर देकर हमें अपार शक्ति का भण्डार दे देते हैं। सारे शरीरधारियों में मनुष्य श्रेष्ठ प्राणी है। अंतःकरण की शक्ति, बुद्धि की शक्ति, चरित्र की शक्ति, सब मनुष्य को श्रेष्ठ बलवान् बना देते हैं। मनुष्य परमेश्वर का जब मित्र बन जाता है तो परमेश्वर भी मित्रता खूब निभाते हैं। उसे भगवान् अन्तःकरण की शक्ति दे देते हैं। और यह सबसे बड़ी शक्ति है। जिसका मन बलवान् है वह निर्बल नहीं पड़ता। वस्तुतः आत्मबल ही तो बड़ा है। भक्त भगवान् को प्रणाम कर रहा है। और प्रभु तो हैं ही अपराजित विजेता।

प्रणाम करने से मनुष्य को कई लाभ होते हैं।

''अभिवादन शीलस्य, नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य बर्द्धन्त, आयु र्विद्या यशोबलम् ।।''

मनु महाराज ने कहा है कि जो अभिवादनशील होता है उसे चार वस्तुएं प्राप्त होती हैं। (१) आयु

www.thearyasamaj.org
बल (२) विद्या (३) यश और (४) शरीर-बल ।

विचार करने पर शरीर का भौतिक बल, मन बुद्धि का मानसिक बल, आत्मा का अध्यात्म बल और समाज का संगठित बल; सब परमात्मा का ही दिया हुआ है । यहाँ, इस प्रार्थना के प्रसंग में भक्त परमेश्वर की कृपापूर्वक सहायता से अपने शरीर, मन और आत्मा के बल को परमेश्वर की मित्रता का फल समझ कर निहाल हो रहा है । घी, दूध, मेवे आदि में बल है तो अवश्य लेकिन यह बल वही प्राप्त करता है जो परमेश्वर के नियमों पर चल कर उनका सदुपयोग कर लेता है । इसी प्रकार मन, बुद्धि चित्त आदि अन्तःकरणों के बल और सबसे बढ़कर आत्मा का बल परमेश्वर के सख्य भाव का, मैत्री भाव का ही परिणाम है । जो परमेश्वर के भक्त नहीं हैं उनके शरीर का बल उन्हें शूर नहीं, क्रूर बनाता है । शेर बलवान है, स्फूर्तिमान है, किन्तु वह शूर नहीं, क्रूर है । अपने से निर्बलों, असहायों पर शेर क्रूरता से निर्दयता से आक्रमण करता है । किन्तु छोटी सी आग की लपट देखकर भाग खड़ा होता है। यह उसकी निर्बलता की पहचान है। इसी प्रकार क्रूर मनुष्य में उचित अनुचित सत्य आदि का भाव होता ही नहीं । वे क्रूर होते हैं । प्रभुभक्त प्रभु का मित्र, पशुबल, तलवार का बल, शरीर का बल सबको तुच्छ समझता है । उसके आत्मा का बल सत्य, न्याय उचित आदि के लिए पशुबल पर भारी पड़ता है । उसके आत्मा का बल, अभय आदि पशुबल पर भारी पड़ता है । इतिहास साक्षी है कि संत महात्मा या आदर्शवादी न्याय के पथिक बड़े-बड़े क्रूर दुष्टों के छक्के छुड़ा देते हैं । क्योंकि उनका मित्र प्रभु है। ऐसे बलवान, सदाचारी, सत्याचारी प्रभु की कृपा को सर्वत्र अपना सहायक पाते हैं ।

''न सः सखा, यो न ददाति सख्ये''

वह मित्र वास्तविक मित्र नहीं है, जो समय पड़ने पर अपने मित्र को बिना मांगे भी सहायता नहीं देता । परमेश्वर हमारे वास्तविक मित्र हैं और वे सहायता के पात्र भक्तों की सदा सहायता करते रहते हैं । गुरुकुल ज्वालापुर में स्वामी दर्शनानन्द कुलपति थे । एक दिन भंडारी ने कहा— आज ब्रह्मचारियों के खाने के लिए कुछ नहीं है । स्वामीजी ने कहा—''चिन्ता न करो, प्रभु देंगे ।'' भोजन का समय हुआ। भण्डारी ने कहा—भोजन की घण्टी बजाने का समय हुआ है । स्वामी जी ने कहा 'घण्टी बजा दो।' ब्रह्मचारी अपनी अपनी थालियाँ लेकर बैठ गए । इतने में एक भक्त तांगा लेकर गुरुकुल में घुसा । उसने आकर निवेदन किया—'आज ब्रह्मचारियों का भोजन मेरी ओर से', और ब्रह्मचारियों ने पूड़ी, सब्जी, खीर आदि का स्वादिष्ट भोजन किया । प्रभु सहायता करते हैं, केवल सहायता लेने वाले में प्रभु के प्रति ईमानदारी होना चाहिए । भक्त भगवान से प्रार्थना करने का अधिकारी है ।

अतः भक्त भगवान् से प्रार्थना करता है कि प्रभु हमें आप अपना मित्र, बना लीजिये । हमें आपकी मित्रता मिल जाय तो हम अकुतोभय हो जायें ।

साभार : वेद वीथिका

www.thearyasamaj.org

''महर्षि वचनसुधा'' – २४

–प्रो० उमाकान्त उपाध्याय

प्रश्न—आर्यावर्त्त की अवधि कहां तक है ?

उत्तर–आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् ।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्य्यावर्त्तं विदुर्बुधाः ।।१।।
सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् ।
तं देवनिर्मितं देशमार्यावर्त्तं प्रचक्षते ।।२।। ।। मनु० ।।

उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पूर्व और पश्चिम में समुद्र ।। १।।

तथा सरस्वती पश्चिम में 'अटक' नदी और पूर्व में 'दृषद्वती' जो नेपाल के पूर्व भाग पहाड़ से निकल के बंगाल के आसाम के पूर्व और ब्रह्मा के पश्चिम ओर होकर दक्षिण के समुद्र में मिली है जिसको 'ब्रह्मपुत्र' कहते हैं, और जो उत्तर के पहाड़ों से निकल के दक्षिण के समुद्र की खाड़ी में अटक मिली है । हिमालय की मध्यरेखा से दक्षिण और पहाड़ों के भीतर और रामेश्वर-पर्यन्त विन्ध्याचल के भीतर जितने देश हैं, उन सबको आर्यावर्त्त कहते हैं । यह देश देवनिर्मित आर्यावर्त्त इसलिये कहाता है 'देव' नाम विद्वानों ने बसाया और आर्यजनों के निवास करने से 'आर्यावर्त्त' कहाया है ।।२।।

—सत्यार्थ० अष्टम० समु०

स्वामी दयानन्द लिखते हैं इस सृष्टि के आदि में मनुष्य की उत्पत्ति संसार के उच्चतम अंश तिब्बत के पठार पर हुई । वहां कुछ दिनों में जनसंख्या बढ़ने लगी और लोगों ने अच्छी, सुन्दर भूमि की खोज आरम्भ की । उनको सबसे उत्तम सबसे अधिक सुविधा प्रदान करने वाली भूमि मिली । उन्होंने उस भूमि का नाम रखा आर्यावर्त्त और वहीं आकर वे बस गये ।

यहां मूल प्रश्न यह है कि आर्यावर्त्त में आर्यों के आने से पहले कोई बसता था या नहीं इसका ठीक उत्तर यह है कि आर्यावर्त्त में सर्वप्रथम आर्य ही आकर बसे । इनसे पूर्व यहाँ कोई नहीं बसता था ।

अंग्रेजों ने जब भारतवर्ष पर अधिकार किया तो उन्होंने भारतवर्ष के इतिहास को अपने स्वार्थ के अनुरूप बिगाड़ कर लिखना आरम्भ किया । उन्होंने कल्पना की कि भारतवर्ष में आर्यों के आगमन से पूर्व लोग बसते थे । आर्यों ने उन्हें युद्ध में हराया । वे दक्षिण भारत की ओर भाग निकले और द्रविड़ कहलाये । भारतवर्ष के लोग अंग्रेजों से कहते थे कि आप आक्रमणकारी हैं और आपको भारतवर्ष छोड़कर चला जाना उचित है । अंग्रेजों ने अपने काल्पनिक इतिहास के बल पर कहा कि सबसे पहले आर्य लोग आक्रमण करके आये और सबसे पहले इन्हीं को जाना चाहिए । यद्यपि आज संसार के सारे इतिहासकार निष्पक्ष भाव से विचार करके यही स्वीकार करते हैं कि आर्य ही सिन्धु घाटी और आर्यावर्त्त

www.thearyasamaj.org

के प्रथम निवासी है ।

मूल प्रश्न यह है कि आर्यों से पहले जो रहते थे उन्होंने अपने देश का क्या नाम रखा था ? और भी एक प्रचण्ड प्रश्न है कि हारने वांला अपनी हार के इतिहास को चाहे छिपा ले या छिपाने की कोशिश करे, किन्तु जीतने वाला अपनी विजय के इतिहास को न कभी छिपाता है, न भुलाता है बल्कि उसे बड़े उत्साह से याद करता है। स्वामी दयानन्द का कहना है कि आर्यों के इतिहास में वेदों से लेकर महाभारत पर्यन्त कहीं भी सिन्धु घाटी के युद्ध या जीतने की कथा का वर्णन नहीं मिलता और न ही द्रविड़ों के इतिहास में यह बात मिलती है कि कभी द्रविड़ लोग सिन्धु की घाटी में रहते थे और वहां से आर्यो से हारकर वे दक्षिण में बसे हैं । भारतीय इतिहास के अनुसार द्रविड़ कोई जाति नहीं है बल्कि क्षत्रियों का ही एक वर्ग है ।

सिन्धु घाटी की सभ्यता, उसकी लिपि और उस सभ्यता के भग्नावशेष सभी यह प्रमाणित करते हैं कि सिन्धु की घाटी में जो सभ्यता फली-फूली थी वह उच्चकोटि की थी और आर्यावर्त्त तथा आर्यों से सम्बन्धित थी।

आज विश्व के सभी निष्पक्ष इतिहासकार यह स्वीकार करते हैं कि भारतवर्ष के आदि निवासी आर्य हैं और सिन्धु नदी की घाटी की सभ्यता उन्हीं की पुरानी सभ्यता का अंश है ।

अब हम मूल प्रश्न पर आते हैं कि आर्यावर्त्त की सीमा क्या है ? स्वामी जी ने प्रमाण पूर्वक यह लिखा है कि पूरब के समुद्र से लेकर पश्चिम के समुद्र तक और उत्तर में हिमालय अर्थात मानसरोवर से लेकर दक्षिण में विन्ध्यांचल तक पश्चिम में सिन्धु से लेकर पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी तक आर्यावर्त्त है ।

यहां एक भ्रम पैदा करने वाली बात यह है कि विन्ध्याचल कहां है? यह विन्ध्याचल जो आर्यावर्त्त कि दक्षिणी सीमा है वह मिर्जापुर वाला विन्ध्य प्रदेश, विन्ध्याचल की भगौती वाला विन्ध्य पर्वत नहीं हो सकता । इससे भ्रम पैदा होता है, न पूरब में समुद्र है न पश्चिम में समुद्र है । पूर्व में उत्कल प्रदेश आ जाता है । अतः स्वामी जी का कहना है कि आर्यावर्त की दक्षिणी सीमा विंन्ध्याचल है, इस बात की आकांक्षा रखता है कि पूर्व और पश्चिम में समुद्र हो अतः विंन्ध्याचल पर्वत, दक्षिण समुद्र के पास है ।

स्वामी जी ने स्वमन्तव्यामन्तव्य में लिखा है--

'आर्यावर्त्त' देश इस भूमि का नाम इसलिये है कि जिस में आदि सृष्टि से पश्चात् आर्य लोग निवास करते हैं परन्तु इस की अवधि उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पश्चिम में अटक और पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी है । इन चारों के बीच में जितना देश है उसी को 'आर्यावर्त्त' कहते और जो इसमें सदा रहते हैं उनको ही आर्य्य कहते हैं ।

यहां एक ऐतिहासिक प्रमाण है जो यह कहता है कि दक्षिण का विन्ध्याचल दक्षिणी समुद्र अर्थात रामेश्वरम् के पास है । इतिहास यह बताता है कि जब हनुमान के साथी बन्दरों की सेना सीता को खोजने दक्षिण समुद्र की ओर निकली थी और रात हो गयी तो बानरी सेना ने वृक्षों पर आश्रय लिया प्रातःकाल जब सबेरा हुआ प्रकाश फैला तो एक प्रश्न उठा था कि हमलोग कहां है? उस समय उत्तर दिया गया था-

''सागरस्योंदधेस्तीरे, विन्ध्योयमितिनिश्चितः''

www.thearyasamaj.org

यह किष्किन्धा काण्ड बाल्मीकि रामायण का पाठ है। इससे यह प्रमाणित हो जाता है कि स्वामी जी जिस विन्ध्याचल की बात कर रहे हैं वह रामेश्वरम् के पास की पर्वत श्रेणियां है। यहां यह भी निश्चित हो जाता है कि यदि आर्यावर्त उत्तर हिमालय से दक्षिण में रामेश्वरम् पर्यन्त है तो पूरब में बंगाल की खाड़ी और पश्चिम में अरब सागर दोनों ओर समुद्र मिल जाता है, तो पूरब में समुद्र से लेकर पश्चिम में समुद्र तक आर्यावर्त्त की सीमा समझ में आ जाती है।

अतः यह प्रकट हुआ कि आर्यावर्त्त उत्तर में हिमालय दक्षिण में विन्ध्य, रामेश्वरम् तक है। पशिचम में अरब सागर और पूरब में बंगाल की खाड़ी आज का भारतवर्ष का सम्पूर्ण प्रदेश आर्यावर्त्त में समा जाता है।

ईशावास्यम्

फोन (०३३) २५२२२६३६ — पी-३०, कालिन्दी

चलभाष : ०९४३२३०१६०२ — कोलकाता-७०००८९

अन्तर्विद्यालय देश-भक्ति गीत प्रतियोगिता

आर्य समाज कलकत्ता (युवा-शाखा) द्वारा स्वाधीनता दिवस के उपलक्ष्य में १८ अगस्त २०१३ रविवार को अन्तर्विद्यालय देश-भक्ति गीत प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें कोलकाता के १७ प्रतिष्ठित विद्यालयों के छात्र-छात्राओं ने देशभक्ति पर आधारित गीतों को प्रस्तुत किया। संस्था की ओर से वाद्य-यन्त्र भी उपलब्ध करवाये गये थे।

प्रतियोगिता के परिणाम के निर्धारण के लिए तीन निर्णायकों का एक निर्णायक मण्डल था। निर्णायक गण थे—श्रीमान् अरिजीत चक्रवर्ती, श्रीमती जयती बवारी एवं श्रीमती जयश्री सेट। निर्णायकों के निर्णय के अनुसार निम्न विद्यालयों के प्रतियोगियों ने क्रमशः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान अर्जित किया।

प्रथम–सुपर्णा मण्डल (कक्षा–१०) लोरेटो डे, सियालदह

द्वितीय–झिनुक बसु (कक्षा–८) सेन्ट्रल मॉडल स्कूल

तृतीय–सिमरन कौर (कक्षा–१२) बालिका शिक्षा सदन

प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान अर्जित करने वाले प्रतियोगियों को स्मृति चिन्ह, प्रमाण पत्र, साहित्य एवं उपहार द्वारा पुरस्कृत किया गया। इसके अतिरिक्त सभी प्रतियोगियों को मेडल, साहित्य एवं प्रमाण पत्र द्वारा सान्त्वना पुरस्कार प्रदान किया गया।

इस कार्यक्रम की अध्यक्षता आर्य समाज कलकत्ता के प्रधान श्री मनीराम आर्य जी ने किया। मुख्य अतिथि के रूप में गोल्ड मेडलिस्ट प्रो० डा० अमित भट्टाचार्य (कलकत्ता विश्व विद्यालय) एवं स्थानीय पार्षद श्री राज किशोर गुप्ता उपस्थित थे।

युवा-शाखा के अध्यक्ष श्री विवेक जायसवाल तथा इस कार्यक्रम के संयोजक श्री उदय सेठ के साथ सभी युवाओं ने कार्यक्रम को सफल बनाने में हर्ष और उत्साह के साथ सक्रिय रहे।

www.thearyasamaj.org

बृहत्तर भारत कर्तारम् श्री कृष्णं वन्दामहे

–प्रो० उमाकान्त उपाध्याय

पांच सहस्त्र वर्षों से भी पुरानी बात है । द्वापर युग का अन्त और कलियुग का आरम्भ होने वाला था । मेगस्थनीज के यात्रा के विवरणों के आधार पर आज २०७० वि०, २०१३ ई० में ५०८५ वर्षो की पूर्व की बात है । भारतीय इतिहास की गणना में भगवान् श्रीकृष्ण का काल ५१५२ वर्ष के लगभग प्राचीन है । श्रीकृष्ण युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के पश्चात्, महाभारत युद्ध के पश्चात् ३६ वर्ष जीवित रहे थे । भारतवर्ष के इतिहास की दृष्टि से यह द्वापर और कलियुग का सन्धिकाल ऐसा कालखण्ड है जब भारत वसुन्धरा पर प्रतिकूलता और विपत्ति की काली घटाएँ घुमड़-घुमड़ कर घिरती चली आ रही थीं। कहने को तो जरासन्ध मगध में सम्राट था और अन्य सब माण्डलिक राजा थे । किन्तु वास्तव में सम्पूर्ण भारत देश खण्ड-विखण्ड होकर राष्ट्रीय दृष्टि से आत्मघाती मार्ग पर बढ़ता चला जा रहा था । सम्राट जरासन्ध इतना अन्यायी था कि उसने ८६ आंचलिक राजाओं को गिरिव्रज के कारागार में बन्दी बना रखा था और एक सौ की संख्या पूरी होने पर उन्हें महादेव की बलि चढ़ा देने की योजना बना रहा था।

इधर हस्तिनापुर में भीष्म जैसे अजेय-बाल-ब्रह्मचारी और द्रोण जैसे शस्त्रास्त्रों के दिग्गज आचार्य थे, किन्तु राष्ट्रीयता की दृष्टि से सब बेकार । अन्धे धृतराष्ट्र की राज्य लिप्सा, कौरव-पाण्डवों का कुलघाती संधर्ष इतना भारी पड़ रहा था कि इन सबके न कोई उच्च राष्ट्रीय अदर्श, न राष्ट्रनीति, न अन्याय का विरोध, कुछ भी न रह गया था। इनकी नाक के नीचे ही इन्हीं के सम्बन्धी, कुन्ती के मातृ पक्ष में, कंस मथुरा में अपने पिता उग्रसेन से यदुवंशियों का राज्य छीनकर उनको कारागार में बन्दी बनाकर स्वयं राजा बन बैठा था और इनके नजदीकी सम्बन्धी हस्तिनापुर वालों के भीष्म, द्रोण, धृतराष्ट्र के कान में जूँ तक न रेंगी । यह था नैतिकता और राष्ट्रीयता के पतन का एक ज्वलंत उदाहरण । कहने को यदुवंशियों के १८ कुल थे और १८ हजार यदुवंशी थे किन्तु सब कंस से डरते थे क्योंकि कंस सम्राट जरासन्ध का दामाद था । जरासन्ध की दो पुत्रियाँ ''अस्ति''और ''प्राप्ति'' कंस को ब्याही थीं । अतः कंस को अपने श्वसुर जरासन्ध का संरक्षण प्राप्त था ।

सम्पूर्ण भारत का राष्ट्रीय परिदृश्य आंचलिक राज्यों में परस्पर संघर्षरत था । पश्चिम में मद्र (ईरान) में शल्य, गांधार (अफगानिस्तान) में शकुनी, सौवीर सिन्धु में जयद्रथ, हस्तिनापुर में कौरव-पाण्डवों का गृह युद्ध, मथुरा में कंस, इधर पूर्व प्राग्ज्योतिषपुर में नरकासुर, भगदत्त, मगध में जरासन्ध, सम्पूर्ण देश अन्याय, अत्याचार, पारस्परिक विद्रोह-विग्रह में कराह रहा था । धर्म की ग्लानि हो रही थी और अधर्म बढ़ता जा रहा था । इसी समय भारत वसुन्धरा का राष्ट्रीय उद्धार करने के लिये **श्रीकृष्ण चन्द्रोदय** हुआ । लोकनायक श्रीकृष्ण ने अपने जीवन के उद्देश्य की घोषणा कर दी –

''परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।

www.thearyasamaj.org

धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे ।।'' गीता० ४—८

अर्थात् श्रीकृष्ण के जन्म और जीवन का उद्देश्य अधर्म का नाश और धर्म की स्थापना तथा दुष्टों का दमन और सज्जनों, साधु-सन्तों की रक्षा करना था । भाद्रपद की कृष्ण अष्टमी को आनन्दकन्द देवकीनन्दन श्रीकृष्ण का जन्म हुआ । श्रीकृष्ण और उनके बड़े भाई बलराम धीरे-धीरे बड़े होने लगे और मल्लयुद्ध में प्रवीण होने लगे । यदुवंशी १८ कुलों में १८ हजार थे और वे कंस को हटाकर उग्रसेन को यादव संघ का राजा बनाना चाहते थे, किन्तु सम्राट जरासन्ध के संरक्षण में रहने के कारण जरासन्ध के जामाता कंस को युद्ध में हराना असम्भव था । अतः श्रीकृष्ण ने द्वन्द्व युद्ध में कंस को मार डालने की योजना बनायी । श्रीकृष्ण और बलराम की मल्ल विद्या का यश चारों ओर फैलने लगा । कंस श्रीकृष्ण और बलराम को मल्ल युद्ध में मरवा डालना चाहता था । कंस के दो दरबारी मल्ल योद्धा थे मुष्टिक और चारूण । कंस ने इन्हें नियुक्त किया कि वे दोनों मल्लयुद्ध में कृष्ण और बलराम को मार डालें । कंस के दरबार में मल्लयुद्ध का आयोजन हुआ । कृष्ण ने चारूण और बलराम ने मुष्टिक को पराजित करके जान से मार डाला । यह देखकर कंस घबरा गया और अखाड़े से भागने लगा । श्रीकृष्ण ने कंस को धर-दबोचा और कंस के भाई सुनामा को बलराम ने आसानी से मार डाला । इधर सम्राट जरासन्ध की दोनों पुत्रियां विधवा हो गयीं और जरासन्ध का क्रोध यदुवंशियों पर बहुत बढ़ गया और वह मथुरा में यादव संघ को नष्ट करने के लिये आक्रमण करने लगा । बाधित होकर यदुवंशी मथुरा छोड़कर पश्चिमी समुद्र के किनारे द्वारका में बस गये । श्रीकृष्ण और बलराम के सामने अस्त्र-शस्त्रों के संग्रह का प्रश्न था । दोनों ही अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा प्राप्त करने के लिए अवन्तिपुरी में सान्दीपनि ऋषि के गुरुकुल में गये—

''अहोरात्रैश्चतुः षष्ट्या तदद्भूतमभूद् द्विजः ।
अस्त्रग्राममशेषञ्च प्रोक्तमात्रमवाप्य तौ ।।'' वि० पु०

भावार्थ यह हुआ कि दोनों भाई कृष्ण और बलराम अवन्तिकापुरी में सान्दीपानि आचार्य के पास अस्त्र-शस्त्र सीखने, प्राप्त करने के उद्देश्य से गये । वहां वे ६४ रात्रिदिन परिश्रम करके अद्‌भुत रूप से सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों को प्राप्त करने में सफल हुए ।

भारतवर्ष का सम्राट जरासंध था और बिना जरासन्ध का वध किये बृहत्तर भारत संघ की स्थापना नहीं हो सकती थी । जरासन्ध के साथ ही दुष्ट अन्यायी राजाओं का एक धड़ा बन गया था । मथुरा में कंस, मगध में जरासंध, असम में नरकासुर, हस्तिनापुर में दुर्योधन, सिन्ध में जयद्रथ, मद्र (ईरान) में शिशुपाल सभी आंचलिक राजा थे । इन्द्रप्रस्थ में युधिष्ठिर को माध्यम बनाकर श्रीकृष्ण बृहत्तर भारत, विशाल भारत को एक संघ राज्य बनाने का सपना देख रहे थे । इस भारत महासंघ के निर्माण में सबसे बड़ी बाधा सम्राट जरासन्ध ही था । उसको सेना की लड़ाई में पराजित करना असम्भव था । श्रीकृष्ण ने कंस को द्वन्द्व युद्ध में मारा था । यह श्रीकृष्ण की सुपरीक्षित नीति थी। श्रीकृष्ण ने भीम और अर्जुन को साथ लेकर जरासन्ध की राजधानी गिरिब्रज की यात्रा की । तीनों स्नातक के वेश में वहां जा पहुँचे

www.thearyasamaj.org
श्रीकृष्ण ने परिचय दिया कि हम तीनों स्नातक हैं और इन दोनों का मौनव्रत हैं । आज आधी रात ये मौन व्रत तोड़ेंगे, उसी समय हम आपसे वार्तालाप करेंगे । सम्राट् जरासन्ध ने अतिथियों को यज्ञशाला में ठहरा दिया । रात बारह बजे जब जरासन्ध उनसे मिलने आया तो श्रीकृष्ण ने तीनों का परिचय दिया और जरासन्ध को द्वन्द्व युद्ध के लिये ललकारा । जरासन्ध ने भीम से मल्ल युद्ध स्वीकार कर लिया। वह कृष्ण और अर्जुन को अपनी जोड़ में हीन समझता था । अगले दिन कार्तिक प्रतिपदा को दोनों का मल्ल युद्ध आरम्भ हुआ । तेरह दिन लगातार कुश्ती होती रही । चतुर्दशी को जरासन्ध कुछ शिथिल होने लगा । कृष्ण ने भीम को प्रोत्साहित किया और भीम ने जरासन्ध को पटककर उसकी टांगे फाड़ दीं । जरासन्ध मारा गया । श्री कृष्ण की नीतिमत्ता थी कि बिना किसी रक्तपात के मगध का साम्राज्य-सेना-कोष सब युधिष्ठिर के अधीन हो गये । कृष्ण ने बन्दी ८६ राजाओं को स्वतन्त्र कर दिया और मगध के सिंहासन पर जरासन्ध के पुत्र सहदेव का राज्याभिषेक कर दिया और इस तरह मगध भी कृष्ण-युधिष्ठिर के अनुकूल हो गया ।

महाभारत युद्ध के सफल नेता श्री कृष्ण–महाभारत का युद्ध कहने को तो कौरव-पाण्डवों का गृह युद्ध था किन्तु वास्तव में यह भारतखण्ड के भाग्य का निर्णायक युद्ध था । कौरव का पक्ष भीष्म, द्रोण, कर्ण आदि के कारण बड़ा प्रबल दुर्जेय था । श्रीकृष्ण को सम्पूर्ण परिदृश्य से हटा देने पर पाण्डव पक्ष अन्धकार में डूब जाता है । श्रीकृष्ण न होते तो भीष्म की शरशय्या, द्रोण-जयद्रथ-कर्ण-दुर्योधन का वध का क्या रूप बनता ? श्रीकृष्ण ने पाण्डवों की रक्षा की, शत्रुओं का वध करवाया । युधिष्ठिर सिंहासनारूढ़ हुए । अश्वमेध यज्ञ हुआ । सैकड़ों राज घराने एक सम्राट् के अन्दर आ गये । खण्ड-खण्ड विभक्त भारत महाभारत बना । यह सब श्री कृष्ण के नेतृत्व के कारण हुआ । **काबुल गान्धार से असम तक सम्पूर्ण भारत एक राष्ट्र महाभारत बन गया, यह कृष्ण की ही सूझ बूझ थी ।**

राजनीतिक दृष्टि से, राजनीति विज्ञान (Political Science) की दृष्टि से, श्रीकृष्ण का महाभारत निर्माण या युधिष्ठिर का अश्वमेघ यज्ञ केवल सम्राट बनने की घोषणा मात्र न था । श्रीकृष्ण ने एक सम्राट के झण्डे के नीचे एक संघशासन (Federal State) की स्थापना कर डाली थी । श्रीकृष्ण स्वयं राजा न थे । किन्तु राजा-निर्माता अवश्य थे । उग्रसेन को कंस वध के पश्चात् राजा इन्होंने बनाया था । जरासन्ध की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र सहदेव को मगध का राजा इन्होंने बनाया था । युधिष्ठिर का राज भी तो इन्हीं का निर्माण था । युधिष्ठिर ने अश्वमेघ यज्ञ किया, वे सम्राट् भी हुए किन्तु श्री कृष्ण ने युधिष्ठिर के सम्राज्य को संघीय स्वरूप दिया । युधिष्ठिर के साम्राज्य का प्रत्येक राज्य अपनी आन्तरिक राजनीति, परम्परा व्यवस्था,आर्थिक विकास, शिक्षा सभ्यता, रहन-सहन में पूर्ण स्वतन्त्र था। यह प्रत्येक राज्य की आंचलिक स्वायत्तता के साथ सम्पूर्ण भारतवर्ष को एक राष्ट्र में आबद्ध कर महाभारत बनाने की योजना श्रीकृष्ण का राजनीतिक उद्देश्य था । यह उनका महाभारत बनाने का नेतृत्व था ।

श्रीकृष्ण चरित्र की अल्पज्ञात घटना–सामान्य रूप में श्री कृष्ण वेद, वेदांग, विज्ञान आदि के विद्वान् अप्रतिम योद्धा थे । श्रीकृष्ण अद्भुत, सदाचारी, ब्रह्मचारी, तपस्वी महापुरुष थे । अपने पुत्र प्रद्युम्न

www.thearyasamaj.org

के जन्म के सम्बन्ध में एक रहस्य का उद्घाटन श्रीकृष्ण ने स्वयं ही सौप्तिक पर्व में किया है—

''ब्रह्मचर्य महद् घोरं चीर्त्वा द्वादश वार्षिकम् ।

हिमवत् पार्श्वमभ्येत्य यो मया तपसार्जितः ।।

समान व्रतचारिण्यां रुक्मिण्यां योऽन्वजायत ।

सनतकुमार तेजस्वी प्रद्युम्नो नाम मे सुतः ।।'' अ० १२/३०—३१

इन श्लोकों का भाव यह है कि श्री कृष्ण ने अपनी पत्नी रुक्मिणी के साथ हिमालय की तराई में १२ वर्षों का महान् घोर ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके तपस्या की और रुक्मिणी ने भी समान रूप से व्रत के अनुष्ठान में साथ तपस्या की । फिर दोनों ने सनत् कुमार जैसा तेजस्वी प्रद्युम्न नामक पुत्र उत्पन्न किया ।

ऐसे चरित्रवान् योगेश्वर श्रीकृष्ण के चरित्र में रासलीला का प्रसंग पुराणयुग के रसिक कथाकारों की रसिक कल्पना मात्र है । श्रीकृष्ण का योगेश्वर योद्धा चक्र सुदर्शनधारी आदि स्वरूप का निदर्शन महाभारत में मिलता है । श्रीकृष्ण के जीवन से अधिक उनके गीता गायक स्वरूप ने संसार को प्रभावित किया है । श्रीमद्भगवद् गीता में श्रीकृष्ण के योग, ज्ञान, कर्म और भक्ति के उपदेशों का बहुत सुन्दर वर्णन है । श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का योगेश्वर स्वरूप बड़ा मनोमोहक है । संजय ने गीता के अन्तिम श्लोक में बहुत सुन्दर कहा है —

''यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।

तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।।'' गीता—१८—७८

जहां, जिस पक्ष में योगेश्वर श्रीकृष्ण हैं, जिस पक्ष में धनुर्धर अर्जुन हैं, उसी पक्ष में श्री, विजय, भूति और ध्रुवनीति है, यही मेरी सम्मति है ।

जन्माष्टमी पर हम योगेश्वर श्रीकृष्ण की वन्दना करते हैं ।

ईशावास्यम्

फोन (०३३) २५२२२६३६ — पी-३०, कालिन्दी

चलभाष : ०९४३२३०१६०२ — कोलकाता-७०००८९

प्रो० उमाकान्त उपाध्याय की नवीनकृति प्रकाशित

'मातृभूमि वैभवम् पृथिवी सूक्त विमर्श'

मूल्य : १२५) रुपये मात्र

प्रकाशक : आर्य समाज कलकत्ता

१९, विधान सरणी, कोलकाता-६

www.thearyasamaj.org

मेरा साठ वर्षीय लेखन कार्य : एक सर्वेक्षण
आर्य समाज विषयक साहित्य

डॉ० भवानीलाल भारतीय

भारतीय नवजागरण में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान करने वाले आन्दोलन आर्यसमाज का इतिहास १३६ वर्ष पुराना हो चुका है । इस बीच इतिहासकारों, शोधकर्त्ताओं तथा भारतीय धर्मान्दोलनों के व्याख्याकारों ने जन चेतना जगाने में अग्रणी रहे, इस संस्था की अनेकविध गतिविधियों पर विस्तार से प्रकाश डाला है । मैं प्रारम्भ काल से आर्यसमाज के इतिहास का एक जागरूक अध्येता रहा । आर्यसमाज के विविध पहलुओं पर मैंने ऐतिहासिक जानकारी युक्त जो विवेचना प्रस्तुत की, उसका संक्षिप्त विवरण निम्न है—

आर्य समाज के शास्त्रार्थ महारथा—१९६९ में ऋषि दयानन्द के काशी शास्त्रार्थ की शताब्दी मनाई गई । इस अवसर पर मैनें दण्डी विरजानन्द से लेकर अमर स्वामी पर्यन्त विख्यात शास्त्रार्थकर्त्ता विद्वानों का विवरण ग्रन्थबद्ध किया । यह ग्रन्थ परोपकारिणी सभा ने प्रकाशित किया। इसका दूसरा संस्करण १९८२ में छपा ।

आर्य समाज के वेद सेवक विद्वान—करनाल निवासी साहित्य प्रेमी रा.सा. चे प्रतापसिंह जी की प्रेरणा से यह ग्रन्थ १९७४ में लिखा गया तथा रामलाल कपूर ट्रस्ट से प्रकाशित हुआ । इसमें दिवंगत तथा तब तक जीवित आर्यसमाज के वैदिक विद्वानों के कृतितत्व का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया था । इस पर चौधरी नारायण सिंह ट्रस्ट ने लेखक को सम्मानित किया गत में डी.ए.वी. कालेज प्रकाशन समिति के अध्यक्ष श्री विश्वनाथ जी की प्रेरणा से इसे संशोधित तथा परिवर्द्धित किया। अब इसमें चर्चित वेद सेवक विद्वानों की संख्या १०३ तक पहुँच गई है ।

परोपकारिणी सभा का इतिहास—सभा के मंत्री श्री श्रीकरण शारदा की प्रेरणा से लिखे इस इतिहास में परोपकारिणी सभा की स्थापना काल से १९७५ तक का इतिहास लिखा गया है । आरम्भ से लेकर १९७५ तक के इस सभा के सभासदों का संक्षिप्त जीवन परिचय भी सचित्र अंकित है ।

आर्य समाज का अतीत और वर्तमान—अपने पाली निवासकाल (१९६२-१९६९) मैंने अजमेर के साप्ताहिक पत्र न्याय में आर्य समाज का उत्थान (प्रारम्भ) तथा वर्तमान शीर्षक से एक लेखमाला लिखी थी। १९७५ के आर्यसमाज स्थापना शताब्दी वर्ष में इस लेखमाला को आर्य प्रकाशन दिल्ली ने पुस्तकाकार प्रकाशित कर दिया।

आर्य समाज अतीत की उपलब्धियां और भविष्य के प्रश्न—आर्य प्रतिनधि सभा पंजाब द्वारा आरम्भ किये गये पं. लेखराम साहित्य पुरस्कार से पुरस्कृत इस ग्रन्थ को उक्त सभा ने १९७८ में

www.thearyasamaj.org

प्रकाशित किया। इसका संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण **'समग्र क्रान्ति का सूत्रधार : आर्यसमाज'** शीर्षक से गो. हा. दिल्ली ने २००१ में प्रकाशित किया।

आर्यसमाज के पत्र और पत्रकार– आर्य समाज का प्रथम पत्र आर्यदर्पण था जो शाहजहांपुर से मुन्शी बख्तावर सिंह ने निकाला था । तब से लेकर १९४० तक प्रकाशित विभिन्न भाषाओं के पत्रों का शोधपूर्ण इतिहास १९४१ में पंजाब सभा ने छपाया।

आर्यसमाज लाला लाजपतराय का अनुवाद–१९१५ में लालाजी ने आर्यसमाज शीर्षक अपना प्रसिद्ध विवेचन प्रधान ग्रन्थ अंग्रेजी में लिखा था जो लंदन से छपा कालान्तर में प्रो. श्रीराम शर्मा ने इसका संशोधित संस्करण प्रकाशित किया। दयानन्द कालेज अजमेर के प्राचार्य रहे श्री दत्तात्रेय बाब्ले ने इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद करने के लिए मुझे आदिष्ट किया। तदनुसार मैंने अजमेर निवास काल में इसे अनूदित किया । आर्यसमाज की स्थापना शताब्दी वर्ष १९८० में इसे प्रकाशित किया गया । कालान्तर में इसे सार्वदेशिक सभा तथा आर्य प्रकाशन ने क्रमशः १९९४ तथा २००१ में पुनः प्रकाशित किया। गो. हा. द्वारा प्रकाशित खण्डों वाली लाजपत राय ग्रन्थावली में भी जो प्रकाशित किया गया है ।

इस बीच मैंने आर्यसमाज विषयक साहित्य की व्यापक जानकारी एकत्र की और एक विस्तृत ग्रन्थ सूची (*Bibliography*) तैयार की इसे १९६५ में गो.हा. ने प्रकाशित किया । जब डा० सत्य केतु विद्यालंकार ने सप्त खण्डात्मक आर्यसमाज का विस्तृत इतिहास लिखने-लिखवाने की योजना बनाई तो मैंने उनके अनुरोध से इस ग्रन्थ माला के पांचवें खण्ड के रूप में लगभग ४०० पृष्ठों में आर्यसमाज के साहित्य का विशद इतिहास लिखा जो १९८६ में छपा । साहित्य विषयक अन्वेषण और सामग्री संग्रह का यह दौर पर्याप्त समय तक चलता रहा और मैंने आर्य साहित्य के लेखकों के क्रमबद्ध विवरण आर्य लेखक कोश के नाम से तैयार किया । इसमें लगभग १३००उन लेखकों का जीवन व कार्य परिचय एकत्र किया गया जो येन केन प्रकारेण आर्यसमाज की विचारधारा को अभिव्यक्ति देने वाले थे। इस आर्य लेखक कोश का प्रकाशन १९९१ में हुआ जब मैं पंजाब विंश्वविद्यालय की सेवा से मुक्त होकर जोधपुर आ गया । वर्णानुक्रम से तैयार किये गये इस कोश को स्थायी संदर्भ सामग्री युक्त बनाया गया है ।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण कृति आर्य समाज की हिन्दी काल को देन (गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से २००० में प्रकाशित) उच्च स्तरीय शोध का परिणाम है । यदि इसे पी.एच.डी. या डी. लिट के लिए प्रस्तुत किया जाता तो ऐसी उपाधि के लिए यह सर्वथा उपयुक्त थी। ४०० पृष्ठों के इस बृहद ग्रन्थ में आर्यसमाज की विचारधारा से अनुप्राणित तथा आर्यसमाज से सम्बद्ध सैकड़ों कवियों तथा उनकी काव्यकृतियों का साहित्य के स्वीकृत मानदण्डों के आधार पर समीक्षण किया गया। भारत के नारी जागरण में आर्यसमाज की भूमिका लघुकृति हैं जो २००३ में गो. हा. से प्रकाशित हुई है ।

८/४२३, नन्दनवन, जोधपुर

www.thearyasamaj.org

साहित्य समीक्षा

डॉ ० भवानीलाल भारतीय

मातृभूमि वैभवम् (अथर्ववेद पृथिवी सूक्त विमर्श–प्रो० उमाकान्त उपाध्याय, प्रकाशक–आर्य समाज कलकत्ता, १९, विधान सरणी, कोलकाता। मूल्य–१२५) रुपये।

अथर्ववेद के १२ वें काण्ड का ६३ मंत्रों वाला पृथ्वीसूक्त एक अत्यन्त उदात्त, विचारोत्तेजक तथा धरती माता के प्रति मानवीय संवेदनाओं को वाणी देने वाला श्रेष्ठ सूक्त है। इस पर आर्य विद्वानों ने अनेक विस्तृत टीकाएं, व्याख्याएं तथा भावोद्बोधक भाष्य लिखे हैं। महाराष्ट्र के विश्रुत वैदिक विद्वान् पं श्रीपाद विनायक सातवलेकर द्वारा लिखे पृथ्वीसूक्त के व्याख्यान में राजनीति की गंध पाकर तत्कालीन शासन ने उसे प्रतिबंधित कर दिया था। मैंने स्वयं १९९३ में **'वैदिक मातृभूमि वंदना'** शीर्षक से इस सूक्त की व्याख्या लिखी थी। जिन आर्य विद्वानों की लिखी व्याखाएं मेरी दृष्टि में आई उनमें से कुछ के नाम हैं—पं० राजनाथ पाण्डेय, स्वामी वेदानन्द तीर्थ, डा० सूर्यदेव शर्मा, पं० प्रियव्रत वेद वाचस्पति (वेद का राष्ट्रीय गीत-विस्तृत व्याख्या), पं० ब्रह्मदत्त सोढा, पं० शिवदयालु (धरतीमाता की महिमा), पं० सुरेशचन्द्र विद्यालंकार, पं० गणेशदत्त शर्मा 'इन्द्र', पं० रणछोड़दास उद्धव, पं० जगतकुमार शास्त्री आदि।

इतनी व्याख्याओं के उपलब्ध होने पर भी आलोच्य कृति (मातृभूमि वैभवम्) की क्या विशेषता है, इस पर हमें विचार करना होगा। ध्यातव्य है कि इस मंत्र समूह की व्याख्या के अतिरिक्त भी प्रो० उपाध्याय ने वेद के अनेक प्रसंगों, सूक्तों आदि की रोचक, मनोग्राही व्याख्याएं लिखी हैं, जिनके अध्ययन से वेदों की सार्वभौम, मानवीय तथा उदात्त शिक्षाओं से पाठक परिचित होते हैं। भूमि सूक्त की यह व्याख्या उनकी नवीनतम कृति है।

ग्रन्थ की प्रस्तावना में विद्वान् लेखक ने अथर्ववेदीय भूमि सूक्त का सामान्य परिचय देकर बताया है कि वेद का मातृभूमि से अभिप्राय किसी भौगोलिक सीमाओं में आबद्ध भूखण्ड से नहीं है। उसके लिए यह सारी धरती ही वसुंधरा तथा वसुधानी है। इन ६३ मंत्रों में पृथ्वी का यथायोग्य धारण-पोषण करने वाले इन सात तत्त्वों की प्रथम मंत्र में चर्चा है जिनके कारण यह पृथ्वी हमारा पालन पोषण तथा धारण करती है। पालन करने वाली होने से वह 'पत्नी' है, इस शब्द को दम्पति अर्थ में लेना उचित नहीं है। मंत्रों का विषयफलक अत्यन्त विस्तृत है। तभी तो धरती पर उत्पन्न होने वाले वृक्षों, वनस्पतियों, लतागुल्मों तथा पृथ्वी तल से निकलने वाले सोना, चाँदी तांबा आदि धातुओं की प्रसवदात्री होने के कारण इस धरती को **'हिरण्य वक्षा'** कहा गया है।

धरती के इस वक्ष स्थल पर जहां जीव, जन्तु, कीटपतंग आरण्यक और ग्राम्य पशुओं का निर्बाध

www.thearyasamaj.org

संचरण होता है वहां क्रियाशील मनुष्य के सम्पूर्ण कार्य व्यापार भी इसी धरती पर होते हैं। यदि संस्कारवान् आर्यगण धरती पर यज्ञादि कर्म कर इस लोक तथा परलोक में पुण्य प्राप्त करते हैं तो सामान्य जन नृत्य, गीत, वाद्य तथा नाट्यादि मनोरंजक क्रियाओं के द्वारा अपना मनोरंजन तो करते ही हैं, इनसे उनके भावों का परिष्कार तथा आनन्द की प्राप्ति भी होती है। वेदों ने जहां अपने अनेक सूक्तों में आध्यात्मिक विधाओं का विधान किया है वहां पृथ्वी सूक्त जैसे लौकिक (सैकुलर) विषय पर सटीक विचार प्रस्तुत कर मानवों का मार्गदर्शन भी किया है। निश्चय ही पृथ्वीसूक्त की यह विचारोत्तेजक टीका पठनीय तथा मननीय है। ८/४२३ नन्दन, जोधपुर

सुन्दरगढ़ जिले के भूकनपड़ा ग्राम में धर्मरक्षा अभियान के अन्तर्गत दो सौ परिवारों ने वैदिक धर्म ग्रहण किया

ओडिशा एवं झारखण्ड की सीमा पर कुछ ग्रामों में ९० प्रतिशत भोले-भाले, सरल स्वभाव के वनवासी निवास करते हैं। इनकी सरलता का लाभ उठाकर कुछ राष्ट्रविरोधी तत्त्व इन्हें लोभ-लालच देकर राष्ट्रीय धारा से अलग करके विदेशी मतों में ढाल देते हैं। उन्हीं में से २०० परिवारों ने १४ जुलाई को श्रद्धापूर्वक यज्ञ में आहुति देकर गुरुकुल आश्रम आमसेना के आचार्य एवं कुशल वैद्य स्वामी व्रतानन्द जी सरस्वती, उत्कल आर्य प्रतिनिधि सभा के वरिष्ठ उपप्रधान श्री पं० विशिकेशन जी शास्त्री के सान्निध्य में पुनः वैदिक धर्म को ग्रहण किया।

यह महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम उत्कल आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पूज्य स्वामी धर्मानन्द जी के मार्गदर्शन में उन्हीं के आदेशानुसार यह धर्म रक्षा अभियान का कार्यक्रम उत्कल आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से चलाया जा रहा है, यह आयोजन श्री वा. परमानन्द जी, श्री वासुदेव जी होता के प्रयत्न से किया गया। इस कार्यक्रम में हजारों श्रद्धालु लोगों ने भी पहुंचकर यज्ञ में आहुति दी और प्रसाद ग्रहण किया।

आचार्य रणजीतार्य विवित्स

मुख्याध्यापक, गुरुकुल आश्रम आमसेना

आर्य समाज, नूरसराय का चतुर्दिवसीय चतुर्थ वार्षिकोत्सव एवं वैदिक धर्म सम्मेलन

स्थान : नूरसराय संगत, ग्राम+पो०-नूरसराय (नालन्दा)-८०३११३

दिनांक : २६, २७, २८, २९ सितम्बर २०१३ गुरुवार, शुक्रवार, शनिवार एवं रविवार को होने जा रहा है।

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

'समत्वं योग उच्यते' का मूर्तरूप थे महात्मा हंसराज

प्रो० ओमकुमार आर्य

महर्षि दयानन्द के देहावसान के पश्चात् जो कुछेक अग्रणी महापुरुष आर्य समाज को मिले, जो सर्वतोभावेन वैदिक धर्म और ऋषिमिशन के प्रचार हेतु पूर्णतः सर्मार्पित थे, उनमें महात्मा हंसराज का नाम सर्वाधिक उल्लेखनीय है। यूं तो उनके समकालीन अन्य आर्य नेताओं का महत्त्व भी कोई न्यून नहीं है जैसे पञ्जाब केसरी लाला लाजपतराय, गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के पुनरुद्धारक स्वामी श्रद्धानन्द, असाधारण प्रतिभा के धनी पं० गुरुदत्त विद्यार्थी, शुद्धि आंदोलन के शहीद पं० लेखराम आर्य मुसाफिर आदि किन्तु महात्मा हंसराज के व्यक्तित्व, कृतित्व एवं योगदान को मैंने विशेष उल्लेखनीय कोटि में इसलिये रखा है क्योंकि उदात्त अवैतनिक सेवा के जिस उच्चादर्श को जिस अविचल निष्ठा और अपूर्व त्याग भावना से महात्मा हंसराज ने जीवन पर्यन्त निभाया उसकी मिसाल अन्यत्र मिलना प्रायः दुर्लभ है। उनकी इसी विशेषता के कारण उनको 'श्वेत परिधान में संन्यासी' 'तप त्याग का प्रतिरूप' 'जीवित शहीद' 'निष्काम कर्मयोगी' आदि अभिधानों से अलंकृत किया जाता है। 'अवैतनिक सेवा' के भीष्म-व्रत को उन्होंने नया आयाम दिया, नई परिभाषा दी और इसी दृढ़ आधार पर डी० ए० वी० का भव्य भवन खड़ा किया जो शिक्षा-जगत् में आज भी अपनी अलग पहचान बनाये हुये है। अपने सुदीर्घ कालीन सेवा कार्य के दौरान जो अनेक उतार चढ़ाव उन्होंने देखे, जिन विषम परिस्थितियों का अडिग रहकर उन्होंने सामना किया उनके मद्देनजर यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं कि गीताकार की परिभाषानुसार वे वास्तव में योगी थे क्योंकि समभाव (Even-mindedly/with even-ness of mind) से समस्त द्वन्द्वों को सहन कर लेना ही योग कहलाता है। योगेश्वर कृष्ण स्पष्ट शब्दों में घोषणा करते हैं, अर्जुन को समझाते हैं--

योगस्थः कुरु कर्माणि संगं त्यक्त्वा धनञ्जयः
सिद्ध सिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ।। गीता २/४८

अर्थात् हे अर्जुन ! प्रत्येक दशा में कर्मफल के प्रति अनासक्त रहना ही 'योगस्थ' होना कहलाता है और प्रत्येक स्थिति में 'समभाव' बनाये रखना ही योग है, अर्थात् समता ही योग है, समभाव और योग दोनों पर्यायवाची हैं—समत्वं योग उच्यते। महात्मा हंसराज के जीवन में अनेक ऐसे प्रसंग उपस्थित हुये जो उनके लिये किसी 'अग्नि-परीक्षा' से कम नहीं थे, आंधी, तूफान और झकझोर देने वाले झंझावात से कम नहीं थे किन्तु वे अडिग रहे, अडौल रहे, अविचल रहे और गीताकार द्वारा संकेतित उस 'समत्व' को बनाये रहे जिसे 'योग' की संज्ञा दी गई है। डी.ए. वी. महाविद्यालय लाहौर जैसी

www.thearyasamaj.org

सुविख्यात् एवं ऐतिहासिक संस्था का संस्थापक प्राचार्य मात्र चार रूपये (४ रु० केवल) मासिक किराये वाले सामान्य से आवास में रहा, प्रतिमास अपने अधीनस्थ स्टाफ को वेतन रूप में हजारों नहीं लाखों रुपये वितरित करता रहा किंतु स्वयं खाली हाथ घर आता रहा, किस प्रकार उस महापुरुष ने अपने 'अवैतनिक-सेवा-व्रत' के चलते स्वयं को और अपने परिवार जनों को एक शान-शौकत और ठाट-बाट की जिंदगी से दूर रहने को राजी किया होगा, इन सब बातों पर गहराई से विचार करें तो निष्कर्ष यही निकलेगा कि महात्मा हंसराज वास्तव में ही 'समत्वं योग उच्यते' का साकार रूप थे । अवैतनिक सेवा उनकी विवशता नहीं थी बल्कि अपने प्यारे ऋषि के ऋण से अनृण होने का, वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार को तीव्र गति से आगे बढ़ाकर 'कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्' के सपने को साकार करने का, अपने प्रिय डी.ए.वी. को शोहरत और स्तर के उच्चतम शिखर पर आसीन करने का स्वेच्छा एवं प्रसन्नता पूर्वक किया गया एक दृढ़ संकल्प था, पावन, पुनीत व्रत था, जिससे उन्हें सदैव आन्तरिक आह्लाद की अनुभूति हुई, पछतावा कभी नहीं हुआ । यजुर्वेद अध्याय १२ मंत्र ११ में राज्याभिषेक के अवसर पर राजपुरोहित जो अपने राजा से कहता है–

.............**ध्रुवस्तिष्ठा विचाचलिः** यजु. १२/११

अर्थात् हे राजन्, आप सदैव अविचल भाव से अपने राजधर्म में स्थित रहें, कुछ ऐसा ही आदर्श महात्मा हंसराज ने अपने लिये चयनित किया हुआ था । किसी प्रकार की कोई भी प्रतिकूल अथवा विषम परिस्थिति उनके कार्य-संपादन में बाधा नहीं बन सकी । कभी भी उनकी कार्य कुशलता, दक्षता, क्षमता, को प्रभावित नहीं कर सकी, उनके कर्त्तव्य-पालन के मार्ग में रोड़ा नहीं बन सकी, इस दृष्टि से देखें तो 'समत्व' के साथ-साथ 'योगः कर्मसु कौशलम्' गीता २/५० की उक्ति भी उन पर सटीक चरितार्थ होती है ।

एक समय ऐसा भी आया जब जीवन-संगिनी माता ठाकुर देवी से सदा-सदा के लिये दुःखद बिछोह हुआ, बड़े सुपुत्र बलराज पर राजद्रोह का संगीन मुकदमा चला, छोटा सुपुत्र योधराज जान लेवा बीमारी से जूझ रहा था, किन्तु महात्मा हंसराज इन सब मुसीबतों के बीच में भी सागर में स्थित उस सुदृढ़, अडोल चट्टान की तरह, जो प्रचण्ड लहरों के थपेड़े खाकर भी टस से मस नहीं होती, उसी प्रकार महात्मा हंसराज भी अटल, अविचल बने रहे । कुछ समय के लिये तो बड़े भाई मुल्खराज से मिलने वाली मासिक आर्थिक सहायता (जो लगभग ४०/- ४५/-रु० थी) भी बन्द हो गई थी तब भी महात्मा जी के 'समत्व', उनकी 'स्थितप्रज्ञता' गीता२/५५, उनकी 'स्थितधी' वाली स्थिति गीता २/५६, पर लेश मात्र भी अन्यथा प्रभाव नहीं पड़ा । नीतिकारों ने महापुरुषों का एक यह लक्षण भी बताया है कि वे सदा 'एकरस' रहते हैं, 'एकरूप' रहते हैं और भगवान् भास्कर की उपमा देकर यह कहा है कि–

उदेति सविता ताम्रस्ताम्रे एवान्तिमेव च ।
सम्पत्तौ विपत्तौ च महतामेकरूपता ।।

अर्थात् सूर्य उदयकाल में भी ताम्रवर्ण होता है और अस्त होते समय भी ताम्रवर्ण ही होता है,

www.thearyasamaj.org

इसी प्रकार सुदिन हों चाहे दुर्दिन, महापुरुष एकरूप ही रहते हैं। और स्पष्ट करते हुये नीतिकारों ने कहा है कि चाहे आदेश राज्याभिषेक का हो, चाहे वनगमन का, मर्यादा पुरुषोत्तम राम के मुख-मण्डल पर वही एक रंग रहता है, न रंग फीका पड़ता है न हर्ष से कोई क्षणिक अतिरिक्त चमक आती है, उनका समभाव सदैव अप्रभावित रहा करता है। उक्त कथन महात्मा हंसराज पर भी अक्षरशः घटता है। महात्मा जी की इसी धैर्यवृत्ति, द्वन्द्वातीत मानसिकता, सांसारिक प्रलोभनों के प्रति अनासक्ति, मिशन के प्रति अटल समर्पण भाव को लक्ष्य करके उनके किसी प्रशंसक ने उनकी शोक-सभा में उनको 'निष्काम ऋषि' तक कहा था। और यह अतिशयोक्ति न होकर यथार्थोक्ति ही थी।

घटनाएं अनेक और भी है, उदाहरण हैं, प्रसंग हैं जो दर्शाते हैं कि महात्मा हंसराज कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी बिना विचलित हुये बड़ी तत्परता से, ईमानदारी से, सत्यनिष्ठा पूर्वक अपने कर्त्तव्यों का निर्वहण करते रहे। किन्तु आज आवश्यकता मात्र इस बात की नहीं है कि उन पर कोई शोधपूर्ण लेख या ग्रन्थ लिखा जाये, लच्छेदार भाषण देकर वाहवाही बटोरी जाये, बल्कि समय का तकाजा और वर्तमान संदर्भ की मांग यह है कि हम उनके सच्चे अनुयायी बनें, सर्वांशतः न सही, अधिकांशतः भी बाद में देख लेंगे, अभी तो अल्पांश में भी यदि उनके आदर्शों को हम अपना लें, उनके बताये हुये रास्ते पर चल सकें, उनके अधूरे छोड़े हुये कार्यों में से किन्हीं दो चार को भी पूरा कर सकें, वैदिक धर्म और ऋषि मिशन के प्रचार प्रसार को व्यर्थ की औपचारिकताओं और दिखावे के भंवरजाल में से निकालकर यथार्थ और वास्तविकता के धरातल पर लाकर कोई ठोस कार्य कर सकें, तो यही उस त्यागमूर्ति, निष्काम कर्मयोगी, 'समत्वं योग उच्यते' के मूर्तरूप महात्मा हंसराज के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी। यदि उनकी इस वर्ष की यह जयंती हममें ऐसी कोई प्रेरणा भर दे तो हम इसे परमपिता परमेश्वर की महती कृपा ही कहेंगे। हम भी उनकी तरह अपने जीवन का ध्येय कुछ इस प्रकार का निर्धारित कर लेते —

मंसूर से यह कह दो कि मरना नहीं मोहाल, मर-मर के फिक्रे-कौम में जीना मुहाल है ।।

काश ऐसा हो जाता तो आज हम कहीं से कहीं पहुंच चुके होते।

संपर्क सूत्र— **१६०७/७, जवाहर नगर, पटियाला चौक, जींद, हरियाणा-१२६१०२**

मो० ०९४१६२९४३४७ फोन ०१६८१२२६१४७

आर्यों के तीर्थ दयानन्द मठ, दीनानगर

जिला—गुरदासपुर (पंजाब) को स्थापित हुए ७५ वर्ष होने पर हीरक जयन्ती समारोह १८, १९, २० अक्टूबर २०१३ को बड़ी धूम-धाम एवं हर्षोल्लास से मनाया जायेगा। जिसमें आप सब महानुभाव सादर आमन्त्रित हैं। निवेदक-**स्वामी सदानन्द सरस्वता**

अध्यक्ष दयानन्द मठ, दीनानगर एवं समस्त परामर्श समिति

सम्पर्क सूत्र—०१८७५-२२०११० ०९४७८२-५६२७२,९४१७२-२०११०

www.thearyasamaj.org

ओं भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात्

– स्वामी ध्रुवदेव जी परिव्राजक (उपाध्याय)

व्याख्यान –

(ओ३म्) यह परमेश्वर का मुख्य या सब नामो में उत्तम नाम है । जैसा पिता पुत्र का प्रेम सम्बन्ध है, वैसे ही ओंकार के साथ परमात्मा का सम्बन्ध है । इस एक नाम से ईश्वर के सब नामों का बोध होता है या इस एक नाम के साथ अन्य सब नाम लग जाते हैं । जैसे आकार से विराट्, अग्नि आदि, उकार से हिरण्यगर्भ, वायु आदि, मकार से ईश्वर, आदित्यादि। **(भूः)** जो सब जगत् के जीवन का आधार, प्राण से भी प्रिय और स्वयम्भू है **(भुवः)** जो सब दुःखों से रहित तथा मुक्ति का इच्छा करने वालों, मुक्तों और अपने सेवक धर्मात्माओं को सब दुःखों से अलग करके सर्वदा सुख में रखता है **(स्वः)** जो स्वयं सुखस्वरूप और अपने उपासकों को सब सुखों की प्राप्ति कराने वाला है, जो नानाविद जगत् में व्यापक होके सब का धारण करता है, नियम में रखता है और सबके ठहरने का स्थान है । उस **(सवितुः)** सब जगत् की उत्पति करने वाले सूर्यादि प्रकाशकों के भी प्रकाशक, सम्पूर्ण ऐश्वर्य से युक्त स्वामी व समग्र ऐश्वर्य के दाता **(देवस्य)** सबके चाहने योग्य, शुद्ध स्वरूप, सर्वत्र विजय कराने वाले परमात्मा का जो **(वरेण्यम्)** अतिश्रेष्ठ या अत्युत्तम ग्रहण या स्वीकार करने योग्य प्राप्त होने योग्य, और ध्यान करने योग्य **(भर्गः)** सब क्लेशों, दुःखों दोषों या दुःखमूलक पापों को भस्म करने वाला व पवित्र करने वाला शुद्ध विज्ञानस्वरूप या चेतन ब्रह्मस्वरूप है **(तत्)** उस इन्द्रियों से न ग्रहण करने योग्य परोक्ष को हम लोग **(धीमहि)** धारण करें व उसका ध्यान करें किस प्रयोजन के लिए कि (यः) जो सविता देव परमात्मा हमारी **(धियः)** बुद्धियों को **(प्रचोदयात्)** उत्तम गुण, कर्म, स्वभावों में प्रेरणा करे अर्थात् बुरे कामों से छुड़ाकर अच्छे-अच्छे कामों में सदा प्रवृत्त करें ।

(संस्कारविधि + वेदभाष्य + पंचमहायज्ञविधि + सत्यार्थ प्रकाश)

इसी प्रयोजन के लिये इस जगदीश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना करना और इससे भिन्न किसी को उपास्य इष्टदेव उसके तुल्य वा उससे अधिक नहीं मानना चाहिये । (संस्कार विधि वेदारम्भ)

इसलिए सब लोगों को चाहिये कि सच्चिदानन्दस्वरूप, नित्यज्ञानी, नित्यमुक्त, अजन्मा, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, व्यापक, कृपालु, सब जगत् के जनक और धारण करने हारे परमेश्वर ही की सदा उपासना करें कि जिससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जो मनुष्य देह रूप वृक्ष के चार फल हैं वे उसकी भक्ति और कृपा से सर्वथा मनुष्यों को प्राप्त हों । (पंचमहायज्ञविधिः)

हे मनुष्यों ! जो सब समर्थों में समर्थ, सच्चिदानन्दानन्तस्वरूप, नित्य शुद्ध, नित्य मुक्त स्वभाववाला, कृपासागर, ठीक-ठीक न्याय करने हारा, जन्ममरणादि क्लेशरहित, आकाररहित, सबके घट-घट का जानने वाला, सब का धर्त्ता, पिता, उत्पादक, अन्नादि से विश्व का पोषण करने हारा, सकल ऐश्वर्ययुक्त जगत् का निर्माता, शुद्धस्वरूप और जो प्राप्ति की कामना करने योग्य है, उस परमात्मा का

www.thearyasamaj.org

जो शुद्ध चेतनस्वरूप है, उसी को हम धारण करें । इस प्रयोजन के लिए कि वह हमारे आत्मा और बुद्धियों का अन्तर्यामी स्वरूप हमको दुष्टाचार अधर्मयुक्त मार्ग से हटाके श्रेष्ठाचार सत्यमार्ग में चलावे, उसको छोड़ कर दूसरे किसी वस्तु का ध्यान हम लोग नहीं करें । क्योंकि न कोई उसके तुल्य और न अधिक है, वही हमारा पिता, राजा, न्यायाधीश और सब सुखों का देनेहारा है ।

(सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लासः)

भावार्थ - १.

जो मनुष्य कर्म, उपासना और ज्ञान सम्बन्धिनी विद्याओं का सम्यक् ग्रहण कर और सम्पूर्ण ऐश्वर्य से युक्त परमात्मा के साथ अपने आत्मा को युक्त करते हैं तथा अधर्म, अनैश्वर्य व दुःखरूप मलों को छुड़ा के धर्म, ऐश्वर्य और सुखों को प्राप्त होते हैं उनको अन्तर्यामी जगदीश्वर आप ही धर्म के अनुष्ठान और अधर्म का त्याग कराने को सदैव चाहता है । (ऋ.दया.कृत यजुर्वेदभाष्य अ.३६/मं.३)

भावार्थ - २.

सब मनुष्यों को चाहिए कि सच्चिदानन्दस्वरूप नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव सब के अन्तर्यामी परमात्मा को छोड़ के उसकी जगह में अन्य किसी पदार्थ की उपासना का स्थापन कभी न करें, किस प्रयोजन के लिए कि जो हम लोगों से उपासना किया हुआ परमात्मा हमारी बुद्धियों को अधर्म के आचरण से छुड़ा के धर्म के आचरण में प्रवृत्त करें । जिससे शुद्ध हुए हम लोग उस परमात्मा को प्राप्त होकर इस लोक और परलोक के सुखों को भोगें इस प्रयोजन के लिये ।

(ऋ.दया.कृत यजुर्वेदभाष्यः अ.२२/मं.९)

भावार्थ - ३.

इस मन्त्र में वाचक लुप्तोपमालंकार है। जैसे परमेश्वर जीवों को अशुभाचरण से अलग कर शुभ आचरण में प्रवृत्त करता है वैसे राजा भी करें । जैसे परमेश्वर में पितृभाव करते अर्थात् उसको पिता मानते हैं वैसे राजा को भी मानें । जैसे परमेश्वर जीवों में पुत्र भाव का आचरण करता है वैसे राजा भी प्रजाओं में पुत्रवत् वर्ते । जैसे परमेश्वर सब दोष, क्लेश और अन्यायों से निवृत्त है वैसे राजा भी होवे।

(ऋ.दया.कृत यजुर्वेदभाष्यः अ.३०/मं.२)

भावार्थ - ४.

मनुष्य सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, सबसे उत्तम, सब दोषों को नष्ट करने वाले, शुद्ध स्वरूप परमेश्वर की उपासना नित्य करें । किस प्रयोजन के लिये ? इसके उत्तर में वेद कहता है—स्तुति, धारणा, प्रार्थना और उपासना किया हुआ वह परमेश्वर हमें सब दुष्ट गुण, कर्म, स्वभावों से पृथक् करके श्रेष्ठ गुण, कर्म, स्वभावों में सदा प्रवृत्त रखे, इसलिये परमेश्वर की स्तुति आदि करना योग्य है । प्रार्थना का यही मुख्य सिद्धान्त है कि जैसी प्रार्थना करें वैसा ही कर्म (आचरण) भी करें ।

(ऋ. दया. कृत यजुर्वेदभाष्य अ.३/मं.३५)

दर्शन योग महाविद्यालय, आर्यवन, रोजड़, पत्रा.-सागपुर, जि.-साबरकांठा (गुजरात) ३८३३०७
दूरभाष : ०२७७०-२८७४१८, २८७५१८

www.thearyasamaj.org

(शेषांश पृष्ठ २ का)

कि स्वामी दयानन्द के अतिरिक्त अन्य आचार्य वेद मन्त्रों का विनियोग पहले करते हैं और विनियोग के आधार पर वेद मन्त्रों के अर्थ करते हैं । जबकि स्वामी दयानन्द ने वेदमन्त्रों के स्वतन्त्र यौगिक अर्थ किये हैं तथा वेदार्थ के आधार पर कर्मकाण्ड में उनका विनियोग किया है । अन्य आचार्यों ने विनियोग पहले किया है तथा उसके आधार पर वेद मन्त्रों के अर्थ किये हैं जबकि स्वामी दयानन्द वेद मन्त्रों के अर्थों के अनुरूप मन्त्रों का कर्मकाण्ड में विनियोग करते हैं ।

द्वितीय सत्र में उपस्थित विद्वानों ने आपस में प्रश्नोत्तर द्वारा विषय को और अधिक स्पष्ट करने का प्रयास किया । तत्पश्चात् सुधी श्रोताओं ने भी उपस्थित विद्वानों के समक्ष अपने प्रश्न उपस्थित कर अपनी जिज्ञासाओं का समाधान प्राप्त किया । कार्यक्रम का कुशल संचालन श्री पं० योगेशराज उपाध्याय जी ने किया । मन्त्री श्री सत्यप्रकाश जी ने सभी के प्रति धन्यवाद ज्ञापन किया ।

शास्त्रीय संगीत प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

गुरुकुल आर्ष कन्या विद्यापीठ, नजीबाबाद, जि० बिजनौर (उ० प्र०) के प्रांगण में मुख्याधिष्ठात्री आचार्या प्रियम्वदा वेदभारती जी के नेतृत्व में दिनांक १८ जुलाई से २८ जुलाई २०१३ तक 'शास्त्रीय संगीत प्रशिक्षण शिविर' का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया ।

इस अवसर पर समस्तीपुर, बिहार से पधारे आर्य भजनोपदेशक संगीताचार्य पं० दयानन्द सत्यार्थी द्वारा कन्याओं को स्वर साधना का शास्त्रीय संगीत के माध्यम से सम्यक् अभ्यास कराया गया जिनके आधार पर पौराणिक गीतों को निरस्त कर वैदिक ईश्वर-भक्ति का भजन रागों पर आधारित गायन शैली बतायी गई जिसमें राग बहार, राग भैरवी, राग भैरव, राग [illegible], राग चन्द्रकोश आदि प्रमुख रहे ।

भजन-गायन के साथ-साथ सरगम, तान, अलाप, आरोह-अवरोह, तराना, नोम तोम, तननन धीं, तनन, सम शून्य खाली पकड़ आदि का ज्ञान कराते हुए तीन ताल का पूर्ण अभ्यास कराया गया तथा सुगम संगीत की भी शिक्षा दी गयी ।

इसी क्रम में झपताल, एकताल, रूपक ताल, त्योरा ताल, कहरवा ताल, स्थायी, दादरा तालों का लिखित एवं प्रायोगिक ज्ञान कराया गया । प्रथम बार इस तरह के शास्त्रीय गायन-प्रशिक्षण प्राप्त कर कन्यायें अभिभूत हुईं । फलतः कन्याओं में संगीत विद्या सीखने की निरन्तर उत्सुकता बनी रही तथा सबका ध्यान आकृष्ट हुआ ।

मुख्य रूप से भाग लेने वाली गुरुकुलीय कन्यायें सुश्री ब्र. कल्पना आर्या, कुमारी मनीषा आर्या, घोषा आर्या, बन्दना आर्या, शिवानी, अपाला, बरेण्या, श्रेया, शीतल, प्रीति, रक्षा, दिव्या, सूर्या, वेदांशी, तनु, कनिका, राखी, वैशाली, अंजली कुमारी आर्या इत्यादि प्रमुख रहीं ।

प्रशिक्षण शिविर के अन्तिम दिन गुरुकुल कमिटी के अध्यक्ष मंत्री, संस्कृत अध्यापक श्री रामेश्वर दयाल शर्मा, श्री रणजीत तिवारी, आचार्या प्रियम्वदा वेदभारती एवं श्रीमती गार्गी आर्या के द्वारा संगीताचार्य पं० दयानन्द सत्यार्थी आर्य भजनोपदेशक (मो. ०९९५५५५४०७८) तथा प्रसिद्ध तबलावादक श्री टीपूलाल आर्य को मन्त्रोच्चारणपूर्वक भव्य स्वागत-सम्मान के साथ विदाई दी गयी । प्रेषिका--**आचार्याश्री**

गुरुकुल आर्ष कन्या विद्यापीठ, कोतवाली मार्ग, निकट श्रवणपुरनहर, नजीबाबाद, जि. बिजनौर,
(उत्तर प्रदेश)-२४६७६३, फोन नं० : ०१३४१-२३१३२१४

www.thearyasamaj.org

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी

– जसवन्त राय गुगलानी

भारतीय इतिहास के अवलोकन से ज्ञात होता है कि हमारे देश पर विदेश से आततायी आकर आक्रमण करके यहां की सम्पदा को लूट कर ले जाते रहे । कभी शक तो कभी हूण, कभी खिलजी तो कभी मुगल, कभी अंग्रेज, फ्रांसीसी तथा पुर्तगाली यहां की अमूल्य सम्पदा को लूट कर ले जाते रहे परन्तु हमारी हस्ती को नहीं मिटा सके । उस का मुख्य कारण है हमारी वेद-मूलक संस्कृति । आज जिसको भारतीय संस्कृति का नाम दिया जाता है वह वस्तुतः वैदिक संस्कृति है । वैदिक संस्कृति को विश्व भर में महत्त्वपूर्ण माना जाता है । एक तो यह संस्कृति प्राचीनतम संस्कृति है, दूसरा इसकी उत्कृष्टता इसके भावों में है ।

वैदिक संस्कृति–हमारी संस्कृति आतंकवाद की संस्कृति नहीं है । और न ही वैदिक संस्कृति Eat, drink and be merry में विश्वास करती है । अन्य संस्कृतियां भौतिक विकास पर बल देती हैं तथा विज्ञान की प्रगति में तथा आर्थिक प्रगति में संतुष्ट है, वैदिक संस्कृति जहाँ भौतिक विकास को महत्व देती है वहां आत्मा के विकास को भी महत्त्व देती है । यों कहा जा सकता है कि हमारी संस्कृति समन्वय की संस्कृति है, इसके अन्तर्गत धन को अर्जित करने को भी जहां परिवार के पोषण हेतु आवश्यक है वहां धन को त्यागभाव से उपभोग करने का निर्देश दिया जाता है। यजुर्वेद के इस मन्त्र का अवलोकन करें :—

ईशावास्यं इदं सर्वं यत्किञ्च जगत्याम् जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विधनम् ।।

वेद भगवान का आदेश है कि धन का उपभोग त्यागपूर्ण ढंग से करो, लालच मत करो, यह धन किसी का नहीं । लक्ष्मी की गति ही निराली है, आज इसके पास है, कल उसके पास । त्यागपूर्ण उपभोग के अभूतपूर्ण उदाहरण हमारे इतिहास में उपलब्ध है :—

रामायण काल में श्रीराम और भरत, दोनों भाई अयोध्या की राजगद्दी को गेंद की भाँति ठोकर मार रहे थे। संसार में अन्यत्र कहीं ऐसा उदाहरण मिल सकेगा जहाँ १४ वर्ष तक राजगद्दी पर भाई की पादुकाएँ प्रतीक के रूप में अयोध्या की राजगद्दी पर आसन आसीन रही हों ? बाली के वध उपरान्त श्री राम ने किष्किन्धा का राज्य अंगद सुग्रीव को तथा रावण को परास्त कर लङ्का का राज्य विभीषण को सौंप दिया । महाभारत काल में श्रीकृष्ण जी ने भीम द्वारा मल्ल युद्ध के माध्यम से भीम द्वारा जरासन्ध के वध के बाद वहाँ का राज्य उसके पुत्र के हवाले कर दिया । स्वयं श्रीकृष्ण ने कंस को मारकर मथुरा की राजगद्दी पर अपने नाना उग्रसेन को बिठा दिया था । ये कुछ उदाहरण हैं त्याग के ।

यज्ञ पारायणता वैदिक संस्कृति की एक अन्य विशेषता है । उसका उद्देश्य है स्व से सर्व की ओर तथा स्थूल से सूक्ष्म की ओर उन्मुख होना । यज्ञ में तीन कर्म मिहित हैं। १. देव पूजा, २. संगतिकरण, ३. दान । देव पूजा के अन्तर्गत दो प्रकार के देवता माने गये हैं। जड़ देव, चेतन देव । देव का अर्थ है देने वाला । जड़ देवताओं में सूर्य, अग्नि, चन्द्र, पृथ्वी आदि देव हैं जो संसार को निरन्तर, प्रकाश, ताप, ऊर्जा आदि अबाध रूप से प्रदान कर रहे हैं तथा चेतन देव हैं, माता-पिता, गुरु, हमारे पूर्वज ।

www.thearyasamaj.org

जड़ देवताओं की पूजा हम अग्निहोत्र के माध्यम से आहुति देकर करते हैं तथा चेतन देव अर्थात जीवित माता-पिता, गुरुजन व वृद्धजन, विद्वत् जन के सेवा, श्राद्ध व उनका तर्पण (तृप्ति) द्वारा इनकी पूजा करते हैं। पाश्चात्य संस्कृति के अन्तर्गत वर्ष में मात्र एक दिन Mother's day, Father's day या Teacher's day होता होगा परन्तु हमारे यहां प्रतिदिन ही माता-पिता, गुरू आदि की पूजा, चरणवन्दना द्वारा आशीर्वाद प्राप्त करने का विधान है । यज्ञ के अन्तर्गत दूसरा महत्त्वपूर्ण कर्म है संगतिकरण जिसका अभप्राय है सत्संग में जा कर अपने बराबर के लोगों से सद्विचारों का आदान प्रदान करना, विद्वत् जन से ज्ञान चर्चा सुनकर अपने इहलोक तथा परलोक को सुधारना व स्वाध्याय करना।

यज्ञ का तीसरा महत्त्वपूर्ण अंग है दान । वैदिक संस्कृति में दान का अपना महत्व है । हमारे शास्त्र हमें निर्देश देते हैं ''शतहस्त समाहर सहस्त्र हस्त संकिर'' सौ हाथों से कमाओ तथा हजार हाथों से दो। परन्तु दान पात्र तथा काल को देखकर देना चाहिए । संत कबीर के जीवन की एक घटना है—एक व्यक्ति एक बार कबीर जी के पास आए तथा उनके लिये कुछ भेंट लायें। संत जी ने उससे पूछा कि यह भेंट किस उपलक्ष में लाये हो ? आगन्तुक ने उत्तर दिया । 'महाराज एक बार जब मेरे पास खाने तक के लिए भी कुछ नहीं था, मैं आप के पांस सहायतार्थ आया था । आप ने मुझे दान में कुछ सूत दिया था । मैंने उस सूत का जाल बनाया तथा उससे पक्षी पकड़ कर बेचने लगा। आज मेरे पास प्रचुर धन हो गया है । अस्तु उस उपकार के बदले मैं आपके लिये भेंट लाया हूँ ।' यह सुन कर कबीर जी का माथा ठनका कि उन्होंने एक कुपात्र की सहायता की जिसके फलस्वरूप सैकड़ों पक्षियों को जान गँवानी पड़ गई। इस पर उन्होंने एक दोहा लिखा—

सूम सूम सब तर गये दानी नरक पड़े ।
बिना विचारे कबीरा दान न कोई करे ।।

निःसंदेह दान का बहुत बड़ा महत्त्व है परन्तु दान का यदि दुरुपयोग हो तो उसका महत्त्व नहीं रहता । समाचार पत्रों व दूरदर्शन के माध्यम से आपने देखा कि कई मन्दिर में इतनी अपार सम्पदा एकत्रित हो गई है जो निष्प्रयोजन पड़ी है, जिस का कोई उपयोग नहीं है । कई बार हम मात्र भगवावस्त्र धारण किये लोगों पर धन लुटा देते हैं जिस का उपयोग मद्यपान, धूम्रपान, सुल्फा, गांजा आदि हेतु प्रयोग होता है । इसके विपरीत वास्तविक उपयुक्त संस्थायें धन के अभाव में अपने उद्देश्य की पूर्ति में असमर्थ होती हैं । हमारे गुरुकुल, अनाथालय धन अभाव में जर्जर, दीनहीन अवस्था में दिखाई देते हैं। यही कारण है कि गुरुकुलों में शिक्षार्थियों की संख्या नगण्य होती है ।

कर्मप्रधान संस्कृति—वेद सत्कर्म करने का आदेश देता है ।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतँ समाः ।
एवं त्वयि नान्यधेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।। यजु-४०/२

यजुर्वेद में मनुष्य का मार्ग प्रशस्त करते हुए कहा गया है कि मनुष्य कर्म करते हुए सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे परन्तु कर्म में लिप्त न हो ।

''आदमी को चाहिए दुनिया में रहना इस तरह ।
तालाब के पानी में जैसे रहता है कमल।।''

अथर्ववेद में भी कर्म के महत्त्व को दर्शाते हुए यह मन्त्र—

www.thearyasamaj.org

कृतं में दक्षिण हस्ते जयो मे सन्य आहितः ।

गोजिद् भूयासमश्वजिद् धनञ्जयो हिरण्यजित् ।।

मेरे दायें हाथ में कर्म और बायें में विजय। कर्मशील व्यक्ति को सब प्रकार की सम्पत्तियाँ, हाथी, घोड़े, गौएं, सोना, चाँदी आदि उपलब्ध हो जाती हैं ।

गीता में भी श्रीकृष्ण जी निष्कामता का वर्णन करते हुए कहते हैं–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।

गीता के इस उपदेश का आधार यजुर्वेद के ४०वें अध्याय का दूसरा मन्त्र है। व्यक्ति का अधिकार कर्म करने में । फल पाने में वह ईशाधीन है ।

वेद भगवान् मनुष्य को सत्कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं ।

जैसा करोगे वैसा भरोगे का सिद्धान्त– प्रभु की न्याय व्यवस्था में कोई त्रुटि नहीं है । जो कुछ पकाने वाले ने अपनी हांड़ी में पकाया है, उसके खाने के लिये वही सुरक्षित रखा हुआ है । अंग्रेजी में भी कहा गया है- As you sow, so shall you reap. किसी कवि ने इसको अपने शब्दों में यों व्यक्त किया है–

''बो के बीज दु:ख के, सुख कैसे पा सकोगे ।

बोया पेड़ बबूल का तो क्या आम खा सकोगे ।।

ईश्वर है न्यायकारी सबके कर्मों के फल का दाता ।

उससे किसी कर्म को कैसे छुपा सकोगे ।।''

सबको इस लोक का सुख तथा परलोक का आनन्द, उसके किये गये कर्मानुसार प्राप्त होगा । किसी देवता, पीर, पैगम्बर या मौलिया की सिफ़ारिश काम नहीं आ सकेगी जब कि अन्य मतावलम्बी अपने पैगाम्बर की सिफारिश पर जन्नत या Heaven को प्राप्त होते हैं उनके सब गुनाह माफ़ हो जाते हैं। एक शेर का मुलाहिज़ा फ़रमायें–

''जब गुनाहगारों पे देखी रहमते परवर दिगार ।

बेगुनाहों ने पुकारा हम गुनाहगारों में हैं ।।''

सर्व हिताय सर्वजन सुखाय का सिद्धान्त– वदिक संस्कृति सारे विश्व के कल्याण की पक्षधर है ।

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतस्तम् ।

उदार चरितानाम् वसुधैव कुटुम्बकम् ।।

वैदिक संस्कृति के अन्तर्गत किसी व्यक्ति, जाति या देश विशेष के कल्याण की कामना नहीं की जाती अपितु सारे विश्व के कल्याण की कामना की जाती है । हमारी प्रार्थनाएं–**''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः''** और ''सुखी बसे संसार सब, दु:खिया रहे न कोई'' इस तथ्य के उदाहरण हैं । वेद ''**कृण्वन्तो विश्वमार्यम्**'' का उद्घोष करता है ।

ईश्वर का वैदिक स्वरूपः–वेद के अनुसार ईश्वर निराकार है । वह अवतार नहीं लेता । उस की मूर्ति या चित्र नहीं बनाया जा सकता । ईश्वर सृष्टि की रचना करता है, पालन करता है, संहार करता है तथा जीवों को उनके कर्मानुसार फल देता है । वह सुख, दु:ख, रोग आदि से परे हैं । वह न्यायकारी हैं, सच्चिदानन्द हैं, अनादि है, अनन्त हैं, निर्विकार हैं ।

www.thearyasamaj.org

वैदिक गृहस्थ :—वेद में चार आश्रमों का विधान है । ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा सन्यास । वैदिक परिवार के स्वरूप का वर्णन बड़े ही सुन्दर ढंग से अथर्ववेद के इस मन्त्र में परिलक्षित होता है।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु संमनाः ।

जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् ।।

जहां पुत्र पिता के सद्गुणों को धारण करेगा, माता के समान मन वाला हो, पत्नी मधु भाषिणी हो तथा सुखद वाणी बोले तो ऐसे परिवार में सुख और शान्ति की वर्षा ही होगी ।

वेद अनुकूल जीवन बनाने से मनुष्य के इह लोक और परलोक दोनों सुधर जायेंगे ।

वैदिक विवाह पद्धति के अन्तर्गत विवाह एक पवित्र बन्धन है । पति-पत्नी सप्त पदी करते एक दूसरे से जो वचन देते हैं उन्हें आयु पर्यन्त निभाया जाता है । हमारे यहाँ विवाह एक गठबन्धन है जिसमें सम्बन्ध विच्छेद (तलाक) की कोई गुञ्जाइश नहीं है ।

एक स्वर्ग तुल्य परिवार का सुन्दर चित्रण आचार्य चाणक्य इस प्रकार से करते हैं—

सानन्दं सदनं सुतास्तु सुधियः कान्ता प्रियालादिनी ।

इच्छा पूर्ति धनं स्वयोषितिरतिः स्वाज्ञापराः सेवकाः ।।

आतिथ्यं शिव पूजनं प्रतिदिन मिष्टान्नपानं गृहे ।

साधो संगमुपासते सततं, धन्यो गृहस्थ आश्रमः ।।

जिस घर में बुद्धिमान पुत्र, मधुर भाषिणी पत्नी, आवश्यकताओं को पूर्ति करने हेतु धन, एक पत्नी (पति) में संतोष, आज्ञा पालन करने वाले सेवक हों तथा जहां अतिथियों का सत्कार होता हो, ईश पूजा होती हो, प्रतिदिन सुस्वादु भोजन प्राप्य हो, सदा सत्संगति होती हो ऐसा गृहस्थ धन्य है ।

यदि विश्व में वेद का प्रचार प्रसार हो तथा जीवन वेदानुकूल ढाला जाये तो विश्व में शान्ति तथा समृद्धि स्वयमेव आ जायेगी ।

H.No. 91, सेक्टर-4, गुड़गांव

'महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास' और आर्य समाज जोधपुर के संयुक्त तत्वाधान में दि. २७, २८, २९, ३० सितम्बर २०१३, शुक्रवार, शनिवार, रविवार और सोमवार को प्रान्तीय स्तर पर एक आर्य सम्मेलन किया जा रहा है । इस सम्मेलन में आर्य जगत् के उच्च कोटि के विद्वान्, तपस्वी, साधु संन्यासी एवं ऋषि भक्त पधार रहे हैं । सम्मेलन में आर्य समाज की वर्तमान स्थिति का अवलोकन करते हुए व्याप्त समस्याओं के सटीक समाधान प्रस्तुत किए जाएंगे तथा उन्हें संगठन के और व्यक्तिगत स्तर पर जीवन में धारण करने के लिए कार्य योजना पर काम किया जाएगा । समस्त ऋषि भक्त, सिद्धान्त निष्ठ आर्यो से प्रार्थना है कि आप सम्मेलन में पधार कर आर्य समाज को जीवन देने वाले अभियान में सहयोगा बनें ।

–विजय सिंह भाटी, अध्यक्ष

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज कलकत्ता द्वारा संचालित आर्य कन्या महाविद्यालय का स्वतन्त्रता दिवस के उपलक्ष्य में कार्यक्रम

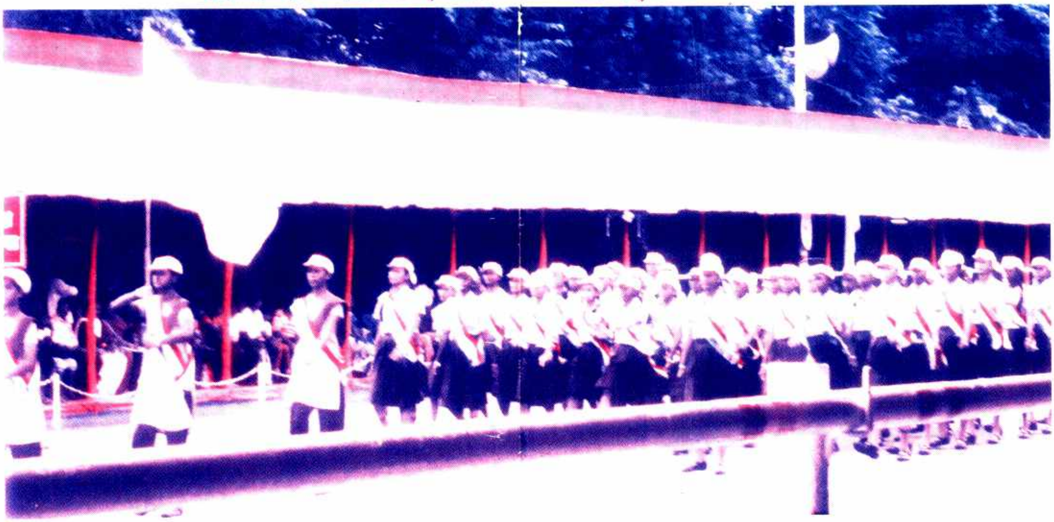

गत १५ अगस्त २०१३ को कोलकाता पुलिस एवं पं० बंग सरकार के सम्मिलित उद्योग द्वारा स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित कार्यक्रम में आर्य कन्या महाविद्यालय की छात्राओं ने शानदार प्रदर्शन किया । कक्षा सप्तम से लेकर कक्षा द्वादश की लगभग ६० छात्राओं ने इस कार्यक्रम में हिस्सा लिया। विद्यालय की शिक्षिकाओं श्रीमती जॉली दास, श्रीमती प्रान्तिका राय एवं श्रीमती दीपिका उपाध्याय के नेतृत्व में इन छात्राओं ने अथक परिश्रम एवं निरन्तर अभ्यास द्वारा भाग लेने वाले अन्य विद्यालयों को अच्छी टक्कर देते हुए अपने प्रदर्शन से सभी का दिल जीत लिया । ज्ञात रहे कि इन छात्राओं को इस प्रकार का प्रशिक्षण कभी नहीं दिया गया था । पहली बार भाग लेने के बावजूद इस सराहनीय प्रयास की सबने भूरि-भूरि प्रशंसा की । पश्चिम बंगाल की **मुख्यमंत्री माननीया सुश्री ममता बनर्जी** ने प्रसन्न होकर विद्यालय को दो लाख रुपये पुरस्कार स्वरूप प्रदान करने की घोषणा भी की । ६ सितम्बर, २०१३ को पुरस्कार की धनराशि विद्यालय को माननीया मुख्यमंत्री ने प्रदत्त किया ।

द्विजेन्द्र लाल राय के जन्म दिवस के मौके पर दक्षिण कोलकाता के वेलवेडियर रोड पर आयोजित कार्यक्रम में १५ अगस्त की परेड में शामिल हुई आर्य कन्या महाविद्यालय की छात्राओं को सम्मानित करती मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ।

विद्यालय की टीचर-इंचार्ज श्रीमती लिपिका आदित्य, सभी शिक्षिकाओं एवं कर्मचारियों के पूर्ण सहयोग द्वारा यह कार्यक्रम अत्यन्त सफल रहा ।

मनीराम आर्य
मंत्री
आर्य कन्या महाविद्यालय

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए पं० उमाकान्त उपाध्याय, एम०ए० द्वारा प्रकाशित तथा एशोशियेटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, बिडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित । मो. : ९८३०३७०४६३